Chhattisgarh TRTI
TRIBAL RESEARCH AND TRAINING INSTITUTE

राजगोंड

एक जनजाति



आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, अटल नगर, नवा रायपुर, छत्तीसगढ़

शासकीय उपयोग हेतु :

प्रतिवेदन क्रमांक :

राजगोंड

एक जनजाति

निर्देशन

शम्मी आबिदी

भा.प्र.से.

प्रस्तुतिकरण

डॉ. अनिल विरूलकर

मीना धनेलिया

अंकिता कुंजाम

अमर दास

निर्मल बघेल

आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, अटल नगर, नवा रायपुर, छत्तीसगढ़

अनुक्रमणिका

क्र. विवरण

अध्ययन क्षेत्र एवं शोध प्रविधियां

छत्तीसगढ़ राज्य में राजगोंड जनजाति प्रमुख रुप से गरियाबंद, महासमुंद, कोण्डागांव आदि जिलों में निवासरत है। राजगोंड जनजाति के विस्तृत मानवशास्त्रीय अध्ययन हेतु गरियाबंद एवं महासमुंद जिलों राजगोंड बाहुल्य ग्रामों को सम्मिलित किया गया है। उपरोक्त जिलों के भौगोलिक परिदृश्य निम्नांकित है -

गरियाबंद जिला एक जनजातीय बाहुल्य जिला है। गरियाबंद जिले का कुल क्षेत्रफल 4834.41 वर्ग किलोमीटर है। यह जिला रायपुर, महासमुंद, धमतरी जिले एवं उड़ीसा राज्य की सीमा से जुड़ा हुआ है। प्रशासनिक सरलता के दृष्टि से गरियाबंद जिले को 05 तहसीलों एवं 05 विकासखण्डों में विभक्त है। वर्तमान में यहां 336 ग्राम पंचायतों में 660 ग्राम है।

जिला महासमुंद, छत्तीसगढ़ राज्य के 4790 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में अवस्थित है। जो रायगढ़, रायपुर जिले एवं उड़ीसा राज्य की सीमा से लगा हुआ है। प्रशासनिक सरलता की दृष्टि से जिले को 5-5 तहसील एवं विकासखण्डो में विभक्त किया गया है। जिले में 1113 आबाद ग्राम है।

कोण्डागांव जिला पूर्ण रुपेण एक जनजातीय बाहुल्य जिला है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 5096.61 वर्ग किलोमीटर है। कोण्डागांव जिला धमतरी, कांकेर, नारायणपुर एवं बस्तर जिले के साथ-साथ उड़ीसा राज्य की सीमाओं से घिरा हुआ है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से इसे 05 तहसीलों कोण्डागांव, केशकाल, फरसगांव, माकड़ी एवं बड़ेराजपुर मे विभक्त किया गया है। जिसमें 383 ग्राम पंचायत एवं 560 ग्राम सम्मिलित है।

भारत की जनगणना 2011 अनुसार संयुक्त रुप से गोंड जनजाति की जनसंख्या सम्मिलित रुप से 4298404 है जिसमें पुरुष 2120974 एवं महिला 2177430 है।

अध्ययन का उद्देश्य -

राजगोंड जनजाति के मानवशास्त्रीय अध्ययन का उद्देश्य निम्नांकित है -

1. राजगोंड जनजाति की सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक विशिष्टता का संकलन करना।
2. राजगोंड समुदाय का संकेन्द्रण, जीवनसंस्कार, धार्मिक जीवन, तीज त्यौहार, राजनैतिक संगठन के साथ-साथ उनके परम्परागत आयामों की जानकारी एकत्रित करना।

अध्ययन का महत्व -

1. राजगोंड जनजाति के सामाजिक सांस्कृतिक पहलुओं को अभिलेखीकृत किया जाना।
2. राजगोंड जनजाति की सास्कृतिक मूल्यों को जानने एवं जनजातीय विषयों में रुचि रखने वाले सामान्यजनों, अध्येताओं एवं अनुसंधानकर्ताओं हेतु द्वितीयक संदर्भ स्त्रोत के रुप में यह अध्ययन उपयोगी होगा क्योंकि राज्य के राजगोंड समुदाय के संदर्भ में विस्तृत जानकारी की पर्याप्त उपलब्धता की कमी है।

अध्ययन क्षेत्र -

राजगोंड जनजाति के मानवशास्त्रीय अध्ययन हेतु निम्नांकित ग्रामों का प्रतिनिधित्व रखा गया है -

<table>
<tr><th>क्र.</th><th>जिला</th><th>विकासखण्ड</th><th>ग्राम का नाम</th></tr>
<tr><td>1.</td><td rowspan="6">गरियाबंद</td><td rowspan="4">देवभोग</td><td>धूपकोट</td></tr>
<tr><td>2.</td><td>सुपेबेड़ा</td></tr>
<tr><td>3.</td><td>झाखरपारा</td></tr>
<tr><td>4.</td><td>सेंदमुड़ा</td></tr>
<tr><td>5.</td><td rowspan="2">मैनपुर</td><td>खजुरपदर</td></tr>
<tr><td>6.</td><td>चिखली</td></tr>
<tr><td>7.</td><td rowspan="2">महासमुंद</td><td rowspan="2">बागबाहरा</td><td>हाथीबाहरा</td></tr>
<tr><td>8.</td><td>बोकरामुड़ाखुर्द</td></tr>
</table>

शोध प्रविधियां एवं तथ्य संकलन-

राजगोंड जनजाति के मानवशास्त्रीय अध्ययन अन्तर्गत जनजाति के सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, रीति-रिवाजों आदि तथ्यों का संकलन राजगोंड बाहुल्य ग्रामों में सघन रुप से लक्ष्य केन्द्रीत समूह चर्चा (Focus Group Discussion), साक्षात्कार (Interview) के माध्यम से किया गया।

द्वितीयक तथ्य हेतु राजगोंड जनजाति के परिप्रेक्ष्य में पूर्व प्रकाशित संदर्भ साहित्यों, पुस्तकों आदि का अवलोकन किया गया है।

इनके समुदाय में स्त्री पुरुष जनसंख्या की आवृत्ति, वैवाहिक स्थिति, शैक्षणिक स्थिति, व्यवसाय परिवार प्रकार, आवास प्रकार, कृषि भूमिधारिता, कृषि उपज, वन आधारित जीवन, पशुपालन मे संलग्नता, मजदूरी पर निर्भरता, शासकीय योजनाओं से परिवारों के लाभान्वित होने की स्थिति आदि की जानकारी प्राप्त करने हेतु अध्ययनित ग्रामों में निवासरत परिवारों में से Random या दैव निदर्शित परिवारों से अनुसूची (Schedule) के माध्यम से जानकारी प्राप्त

की गई।

राजगोंड समुदाय के वैवाहिक संस्कार का अर्द्ध सहभागी अवलोकन (semi Participant Oservation) किया गया।

साथ ही उनके आवास, धार्मिक जीवन, धार्मिक स्थान, ईष्ट देव, पूर्वज देव आदि स्थानों का अवलोकन (Observation) पद्धति से अभिलेखन किया गया ।

क्षेत्रकार्य उपरांत अनुसूची से प्राप्त मात्रात्मक आंकड़ों (Quantitative½ का सारणीयन कार्य कर तालिकाओं (Tabulation) के माध्यम से एवं गुणात्मक तथ्यों (Qualitative Data) का विश्लेषण किया गया । क्षेत्रकार्य के दौरान राजगोंड समाज द्वारा प्रदत्त जानकारी विशेष में एक अन्य क्षेत्र के प्रतिनिधी अनुपस्थित रहने के कारण दी गई जानकारी मे विरोधाभाष होने की सूचना देने पर अनुसंधान दल द्वारा पुनः छुरा क्षेत्र का अध्ययन भ्रमण कर दोनों ही क्षेत्रों के सामाजिक प्रतिनिधियों से संपर्क कर उनके विरोधाभाषों को दूर कर सहमति प्राप्त होने पर प्रतिवेदन लेखन (Report Writing) का कार्य संपन्न किया गया ।

अध्याय 01

परिचय एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

गोंड जनजाति राज्य में बहुलता से निवास करने वाली जनजाति है। यह समुदाय राज्य के प्रायः सभी जिलों में निवासरत है। छत्तीसगढ़ राज्य हेतु जारी अनुसूचित जनजाति की सूची में अनुक्रमांक 16 पर गोंड अन्य उपजातियों के साथ अधिसूचित है, जिसमें राजगोंड भी अधिसूचित है। राजगोंड मूल रुप से गोंड होकर ही एक पृथक जनजातीय समुदाय के रुप में स्थापित है। रसेल एवं हीरालाल के अनुसार "गोंड जनजाति के राजगोंड एवं खटोला गोंड दो प्रमुख उप विभाजन रहे है। राजगोंडों पर गोंड एवं राजपूत के साहसिक कार्यो का प्रभाव परिलक्षित होता है राजगोंड अन्य हिन्दु कृषक जातियों की श्रेणी में दिखाई देते है और वे पवित्र जनेउ भी धारण करते है।"

भारतीय मानववैज्ञानिक सर्वेक्षण की कृति (K.S.Singh) Peoples of India के अनुसार राजगोंड पूर्ववर्ती रियासतकालीन समय में एक शासक वर्ग रही है या गोंड शासकों के अधिक नजदीकी समुहों के रुप में रही है। गोंड शब्द के पूर्व उपसर्ग के रुप में राज शब्द का संबोधन गोंड साम्राज्य को परिभाषित करता है।

कल्चुरी कालीन सभ्यता के समाप्ति के बाद गोंड शासकों ने नर्मदा क्षेत्र की सत्ता संभाली इस प्रकार गोंडों के राज्य की प्राचीन राजधानी गढ़ा बनी तथा गढ़ा और कटंगा दो ग्राम मिलकर गढ़ा कटंगा राज्य कहलाये। वरन गोंड राजाओं के चार राज्य चौदहवीं शताब्दी में हुआ करते थे, जिसमें पूर्ववर्ती मध्यप्रदेश के बैतूल के खेडला, छिन्दवाड़ा में देवगढ़, जबलपुर में गढ़ा, मण्डला और मांडक के चांदा क्षेत्र शामिल है।

उत्पत्ति एवं नामकरण

शिव कुमार तिवारी की कृति चरितानि राजगोंडानाम के अनुसार नर्मदा घाटी सभ्यता/कल्चुरी सभ्यता के विशाल साम्राज्य के नष्ट होने के उपरांत वनाच्छादित क्षेत्रों के बीच छोटे-छोटे रजवाड़े ही शासन के रुप में बच गये थे। इन रजवाड़ों को किले या गढ़ कहा गया। इन्ही रजवाड़ों के नये शासक क्षेत्रीय अरण्यवासी गोंड समुदाय के थे। ये गोंड शासक वनवासियों के साथ - साथ स्थायी रुप से ग्रामों में निवास करने लगे। गोंड कृषि कार्य करने के साथ-साथ राज सेनाओं में शामिल हुए जिससे इन्हें राजकाज की जानकारी होने लगी थी, समय के साथ साथ रजवाड़ों में इनके शासन की प्रभुता भी स्थापित हो गई। जिसके कारण ये कालांतर में **राजगोंड** कहलाये।

राजगोंड समुदाय किवदंती के रुप में उल्लेखित करते है कि, मुगलों के साथ हुई लड़ाई में दिल्ली, चांदागढ़ से गोंड शासको द्वारा भी विद्रोह किया गया था। विद्रोह में गोंडों के 52 गढ़ भी शामिल थे। इस लड़ाई में गोंड समुदाय के कुछ सदस्य लड़ाई में हार के भय के कारण आम के बगीचे, कोटरों में जाकर छुप गये, कुछ सदस्य भय की अवस्था में नदी किनारे रेत/धूल में घूस कर छिपे रहे। वही इनके कुछ सदस्यों द्वारा अंत तक युद्ध किया तथा विजयी हुए, तदोपरांत उनके द्वारा इन छिपे हुए सदस्यों की खोज की गई जिसमें आम के बगीचे में छिपे हुए गोंड सदस्यों को विजयी गोंड सदस्यों द्वारा **अमात गोंड** एवं रेत/धूल में छिपे सदस्यों को **धूर या ध्रुव गोंड** कह कर संबोधित किया तथा जिस समूह ने युद्ध में अंत तक पराक्रम दिखाया व युद्ध जीत कर क्षेत्र में राज किया वह राजगोंड कहलाने लगे।

राजगोंड समूह अन्य गोंड समूहों से युद्ध कौशल एवं विद्या अर्जन के कारण अधिक उन्नत मानते हुए स्वयं को उच्च मानते है।

वर्तमान में राजगोंड समुदाय द्वारा सामाजिक संगठन के दृष्टिकोण से अपने निवास क्षेत्रों को राज के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। जिसमें प्रत्येक राज या क्षेत्र में 2 या 2 से अधिक सर्कल होते है और एक सर्कल में 2 से अधिक गांव सम्मिलित होते है। ग्राम स्तर पर राजगोंड जनजाति के दो या दो से अधिक गोत्र के सदस्य मिलकर एक मांदी का निर्माण करते है।

अध्याय 02
सामाजिक जनांकिकीय

जनांकिकीय को जनसांख्यिकीय भी कहा जाता है। जनसांख्यिकीय का अर्थ एक सामान्य विज्ञान है, जिसे किसी भी तरह की गतिशील मानव समुदाय पर लागू किया जा सकता है। यह सामाजिक जनसंख्या अध्ययन का व्यापक क्षेत्र है, जिसमें किसी जनसंख्या को प्रभावित करने वाले आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और जैविक प्रक्रियाओं के बीच संबंधों का विश्लेषण किया जाता है।

राजगोंड जनजाति के नृजातीय अध्ययन हेतु 101 परिवारों का परिवार अनुसूची के माध्यम से उनके जनांकिकीय पहलुओं का अध्ययन किया गया। जिसका विवरण निम्नानुसार है -

परिवार का प्रकार

क्र .	परिवार प्रकार	परिवार संख्या	
		संख्या	प्रतिशत
1	केन्द्रीय या मूल	83	82.18
2	संयुक्त	18	17.82
योग		101	100.00

सर्वेक्षित राजगोंड जनजाति में 82.18 प्रतिशत (N=83) परिवार मूल या केन्द्रीय प्रकार एवं 17.82 प्रतिशत (N=18) परिवार वर्तमान अपने रक्त संबंधियों के साथ संयुक्त परिवार के रुप में निवासरत है।

उपरोक्त 101 परिवारों में महिला-पुरुष जनसंख्या का विवरण निम्नांकित है -

विवरण	जनसंख्या	
	संख्या	प्रतिशत
महिला	238	51 .74
पुरुष	222	48 .26
योग	460	100 .00
कुल सर्वेक्षित परिवार -	101	

सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों की कुल जनसंख्या 460 पायी गई जिसमे 51.74 प्रतिशत महिला, एवं 48.26 प्रतिशत पुरुष जनसंख्या शामिल है।

लिंगानुपात

सर्वेक्षित परिवारों में स्त्री-पुरुष लिंगानुपात का विवरण निम्नांकित है -

पुरुष जनसंख्या	स्त्री जनसंख्या	लिंगानुपात
222	238	1072

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि, राजगोंड जनजाति में स्त्री-पुरुष लिंगानुपात 1072 है। जिससे स्पष्ट है कि, सर्वेक्षित जाति में प्रति हजार पुरुषों की तुलना में महिलाओं का जनसंख्या अधिक है। जो कि छत्तीसगढ़ राज्य के कुल स्त्री-पुरुष लिंगानुपात 991 से अधिक है।

उम्र समूह अनुसार जनसंख्या

किसी भी जाति समुदाय के जनांकिकीय अध्ययन हेतु जाति के समुदाय के उम्र समूहवार जनसंख्या का विशेष महत्व होता है। सर्वेक्षित परिवारों में की कुल जनसंख्या में आयु समूह अनुसार वर्गवार वितरण निम्नानुसार है -

उम्र समूह अनुसार जनसंख्या आवृत्ति

क्र.	विवरण	जनसंख्या					
		पुरुष		महिला		योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	0-3	14	6.31	11	4.62	25	5.43
2	4-6	9	4.05	14	5.88	23	5.00
3	7-14	42	18.92	43	18.07	85	18.48
4	15-18	16	7.21	18	7.56	34	7.39
5	19-21	10	4.50	12	5.04	22	4.78
6	22-40	71	31.98	76	31.93	147	31.96
7	41-60	49	22.07	49	20.59	98	21.30
8	60 से अधिक	11	4.95	15	6.30	26	5.65
	योग	222	48.26	238	51.74	460	100.00

उपरोक्त तालिका अनुसार सर्वेक्षित राजगोंड जनजाति की कुल जनसंख्या 460 में से 22-40 आयु वर्ग वयस्क समूह में जनसंख्या 31.96 प्रतिशत पायी गई, इस आयु वर्ग में कुल महिलाओं की जनसंख्या का 31.93 प्रतिशत एवं कुल पुरुषों में 31.98 प्रतिशत पुरुष जनसंख्या है। समुदाय मे 0-6 उम्र समूह में 5.43 प्रतिशत जनसंख्या है तथा 60 वर्ष से अधिक उम्र समूह के 5.65 प्रतिशत सदस्य जिसमें महिला 6.30 प्रतिशत तथा 4.95 प्रतिशत पुरुष सदस्य शामिल है।

वैवाहिक स्थिति

विवाह वह आधार है जो स्त्री-पुरुष को अपना नया कुटुम्ब बनाने की स्वच्छंदता देता है और बच्चो के पालन-पोषण तथा आर्थिक सहकारिता व सामाजिक उत्तरदायित्व की नींव को बनाता है। सामाजिक दृष्टिकोण से विवाह का महत्व बच्चों को जन्म देना और समाज की निरन्तरता को कायम रखना होता है। विवाहोपरांत एक दम्पत्ति अपने परिवार का भरण पोषण व समुदाय की संस्कृति को प्रथागत रुप में हस्तांतरित करने की शिक्षा प्रदान करता है। सर्वेक्षित राजगोंड जनजाति में सदस्यों के वैवाहिक स्थिति का विवरण निम्नानुसार है -

वैवाहिक स्थिति का विवरण

क्र.	विवरण	संख्या					
		पुरुष		महिला		योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	विवाहित	119	53.60	116	48.74	235	51.09
2	अविवाहित	100	45.05	104	43.70	204	44.35
3	विधवा / विधुर	3	1.35	18	7.56	21	4.57
	योग	**222**	**100.00**	**238**	**100.00**	**460**	**100.00**

उपरोक्तानुसार राजगोंड जनजाति में कुल सदस्यों की संख्या से आधे से अधिक 51.09 सदस्य विवाहित है। सर्वेक्षित परिवारों के कुल महिला सदस्यों में से 48.74 प्रतिशत महिला एवं कुल पुरुष सदस्यों में से 53.60 पुरुष सदस्य विवाहित है। वहीं 4.57 प्रतिशत महिला एवं पुरुष सदस्य विधवा / विधुर व परित्यक्ता के रुप में जीवनयापन कर रहे है।

वैवाहिक उम्र

ग्रामीण अथवा जनजातीय समाजों में प्रायः लड़के-लडकियो के युवावस्था में प्रवेश करते ही उनके विवाह की तैयारी की जाती है। राजगोंड जनजाति में भी बालिकाओं के माहवारी के प्रारंभ होने तथा शारीरिक रुप से आने वाले परिवर्तनों के आधार पर तथा बालकों के दाढ़ी-मूंछ आने पर उन्हें विवाह योग्य माना जाता है। सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में स्त्री-पुरुषों के वैवाहिक उम्र का विवरण निम्नानुसार है -

वैवाहिक उम्र का विवरण

उपरोक्त तालिका अनुसार सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में वर्तमान में शासन द्वारा अधिमान्य आयु में विवाह के प्रति जागरुकता दिखाई देती है। इनमें 18-20 वर्ष की आयु में 44.49 प्रतिशत स्त्री-पुरुषों के विवाह किये गये है जिसमें 55. 17 प्रतिशत बालिकाओं एवं 33.33 प्रतिशत बालकों के विवाह उक्त आयु में सम्पन्न हुए है। वहीं में 31.03 प्रतिशत बालिकाओं के 16-17 वर्ष तथा 11.20 प्रतिशत बालिकाओं के विवाह 13 से 15 वर्ष की आयु में विवाह किये गये है।

शैक्षणिक स्थिति

शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसमें मनुष्य ज्ञान अर्जित करता है जो उसे समाज में मूल्यवान बनाता है, मनुष्य को बौद्धिक रुप से तैयार करने की क्रिया जो उसे जीवन में परिपक्व बनाने के साथ निर्णय लेने की शक्तियों का विकास शिक्षा के द्वारा ही होता है। शिक्षा मूल रुप से शिक्षकों के द्वारा ही प्रदाय की जाती है, पूर्व में जहां शिक्षा गुरुकुल में रह कर प्राप्त की जाती थी जो वर्तमान परिवेश में विद्यालयों, महाविद्यालयों के द्वारा नियत समय में उपलब्ध करायी जाती है।

जनगणना 2011 अनुसार राज्य की साक्षरता दर 70.28 प्रतिशत है। वही राज्य में अनुसूचित जनजाति साक्षरता दर 50.03 प्रतिशत दर्ज की गई। जिसमें पुरुष साक्षरता 58.85 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 41.38 प्रतिशत है।

तद्नुसार सर्वेक्षित 101 राजगोंड परिवारों में महिला-पुरुष में शैक्षणिक स्थिति का विवरण निम्नानुसार है -

क्र.	विवरण	जनसंख्या					
		पुरुष		महिला		योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	साक्षर	145	72.86	113	53.05	258	62.62
2	निरक्षर	54	27.14	100	46.95	154	37.38
	योग	**199**	**100.00**	**213**	**100.00**	**412**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में 37.38 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर एवं 62. 62 प्रतिशत जनसंख्या साक्षर पायी गयी। उक्त शिक्षित जनसंख्या में 72.86 प्रतिशत पुरुष एवं 53.05 प्रतिशत महिला जनसंख्या साक्षर है।

क्र.	विवरण	संख्या					
		बालक		बालिका		योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	आंगनबाडी	4	8.89	2	3.57	6	5.94
2	प्राथमिक स्तर	24	53.33	30	53.57	54	53.47
3	माध्यमिक स्तर	11	24.44	11	19.64	22	21.78
4	हाईस्कूल स्तर	3	6.67	9	16.07	12	11.88
5	हायर सेकंडरी स्तर	2	4.44	2	3.57	4	3.96
6	स्नातक स्तर	1	2.22	2	3.57	3	2.97
	योग	45	**100.00**	**56**	**100.00**	**101**	**100.00**

अध्याय 03
बसाहट एवं आवास

राजगोंड निवासरत बहुतायत गांव सुदुर क्षेत्रों में तथा वन क्षेत्रों के मध्य में पाये जाते है। ये ग्राम मुख्य सड़क से कच्चे पक्के मार्गो के माध्यम से जुड़े होते है। इन्ही मार्गो से ग्राम मे प्रवेश किया जाता है। ग्राम प्रवेश पर गांव की सीमा में ग्राम देव का स्थान होता है। जहां ग्रामवासी वर्ष में कम से एक बार पूजा अर्चना करते है। इसी सीमा से लगा हुआ ग्राम का दईहान, गौठान होता है। जहां ग्रामवासी प्रत्येक दिवस अपने मवेशियों को चारागाह में जाने के पूर्व एकत्रित करते है। जहां से गांव का चरवाहा चारागाह या वनों में चरने ले जाता है। कुछ ग्रामों में गौठान से लगे हुए पानी के स्रोत जैसे तालाब, डबरी आदि भी होते है। जहां ग्राम निस्तारी व पशुओं के पीने के पानी व नहाने हेतु जल उपलब्ध होता है।

ग्राम के इसी मार्ग से अन्दर प्रवेश करने पर यह मार्ग एक चौराहे या तिराहे पर मिलता है। जहां से कई छोटे-छोटे कच्चे रास्तों मे विभक्त हो जाता है। जिसके दोनों किनारे पर कच्चे-पक्के आवास बने होते है। ग्राम व्यवस्था में राजगोंड जनजाति के आवास प्रायः गांव के मध्य में देखने को मिलता है। इनके गांव या पारे-टोले में हल्बा, गोंड, बिंझवार, कोंध, कुर्मी, रावत, लोहार, नाई, मरार, केंवट, आदि जाति समुदाय भी निवास करती है। ग्राम्य व्यवस्था में प्रभु जातियों का स्थान मध्य में होता है और इनके बाद जातीय स्तरीकरण के आधार पर ग्राम में अन्य जातियों का स्थान निर्धारित होता है। इनके ग्रामों में राजगोंड जनजाति को प्रभु जाति माना जाता है तथा गांव व्यवस्था में इनके आवास मध्य में अवस्थित होते है। राजगोंडों के आवास एक दूसरे के आस-पास ही बने होते है जिन्हें **''गोंड पारा''** के नाम से भी जाना जाता है।

राजगोंड जनजाति पूर्व में अपने मूल स्थान से वर्तमान स्थान पर प्रवासित हुए है वहां मूल स्थान की मिट्‌टी लाकर निवासरत ग्राम में उस मिट्‌टी को एक स्थान पर माटीदेव के रुप में स्थापित किया गया है। माटीदेव के स्थान के आस-पास बसाहट तैयार की गई।

इनकी बसाहट गोलाकार व वर्गाकार रुप में होती है। ग्राम में सड़कों के संपर्क से या आबादी वाले क्षेत्र में पेयजल हेतु वर्तमान में हैण्डपंप, ट्युबवेल, नल आदि की व्यवस्था देखने को मिलती है। जहां से ग्रामीण अपने दैनिक उपयोग हेतु पानी लेकर जाते है। कुछ वनाच्छादित ग्रामों में वर्तमान में भी परम्परागत रुप से पेयजल स्रोत के रुप मे कुंआ का उपयोग दिखाई देता है। जहां पारम्परिक तकनीक **टेड़ा** (लंबे बांस से बंधी बाल्टी) से पानी निकाला जाता है। ग्राम के मध्य में पंचायतों या बैठकों हेतु खाली स्थान या मंच होता है जहां ग्राम की आम/सामाजिक बैठकें होती है या रात्रि में ग्रामवासी समूह में आपसी वार्तालाप करते है। राजगोंड ग्रामों में ग्राम के मध्य में नीम के वृक्ष के नीचे इनकी ईष्ट देवी का भी स्थान होता है जहां तीज-त्यौहारों में पूजा-पाठ कर भोग लगाया जाता है।

वही ग्राम के पृथक-पृथक भाग में तालाब, पोखर या कुंआ होता है जिससे ग्रामवासी अपनी निस्तारी करते है। ग्राम के चारों ओर अथवा उसके एक सिरे से लगा हुआ कृषि भूमि का क्षेत्र होता है जहां मौसम आधारित फसलें ली जाती है, जो इनकी आय का मुख्य स्रोत होता है। ग्राम के बाहरी छोर पर इनका शवाधान स्थल होता है।

आवास -

आवास निर्माण हेतु इनके द्वारा मांझी (पुजारी), गुनिया, सिरहा के माध्यम से किसी भूमि का परीक्षण कराया जाता है कि, यह स्थान रहने योग्य है अथवा नही ? इस हेतु स्थान विशेष पर एक गड्डा खोदकर उसमें पानी भर दिया जाता है। यदि पानी देर से सूखता है तो उस स्थान को पवित्र मानकर उस स्थान चयन घर के निर्माण हेतु किया जाता है। किन्तु यदि गढ्ढे का पानी शीघ्रता से सुख जाता है तो उक्त भूमि को विभिन्न का सामाजिक-सांस्कृति मान्यताओं के अनुरुप रहने या वास करने योग्य नही माना जाता है।

राजगोंडों के आवास अन्य समुदायों के आवासों की तुलना में अपेक्षाकृत थोड़े बड़े होते है। इनके आवास स्वच्छ व साफ-सुथरे होते है। इनके आवास प्रायः लकड़ी, मिट्टी, ईट निर्मित कच्चे व अर्द्ध पक्के प्रकार के होते है। जिसकी छत खपरैल या खदर से बनाई जाती है, वहीं फर्श प्रायः मिट्टी की होती है। आवास का निर्माण सामान्यतः स्वयं के परिवार के सदस्यो के पारस्परिक सहयोग से किया जाता है। कार्य का विभाजन उसकी प्रकृति के आधार पर होता है जैसे अधिक बल या मेहनत वाले कार्य जैसे मिट्टी खोदना, पानी लाना, लकड़ी लाना, छत बनाना आदि पुरुष वर्ग द्वारा तथा मिट्टी के लोंदे बनाना, उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाना, छबाई, लिपाई का कार्य महिला वर्ग द्वारा किया जाता है। आवास के निर्माण के लिए मिट्टी को भीगाकर उसमें धान की पेरोसी, मिलाई जाती है जिससे मिट्टी अच्छी तरह गुथ जाती है। मिट्टी को पैरों से रौंदकर लोंदा (मिट्टी का गोला) बनाया जाता है और इन लोंदे को एक के उपर रखकर 1 से 2 फीट की ऊंचाई व 8-10 फीट की लंबाई (कमरे की लंबाई अनुसार) देकर सुखने दिया जाता है इस प्रकार 4 से 5 दिवस में दीवाल का स्वरुप दिया जाता है। 8 से 10 फीट उंची दीवाल बन जाने के बाद दो दीवालों के उपर मोटी लकड़ी क्षैतिज रखी जाती है। जिसे म्यार कहा जाता है। शेष दो दीवालों में म्यार के दोनों तरफ क्षैतिज अवस्था में कम मोटाई की लकड़ी रखी जाती है जिसे पाटी कहा जाता है। पाटी बिछ जाने के बाद उसके उपर पतली-पतली लकड़ी या बांस को बीच से फाड़कर कमचिल रखी जाती है, जिसे छर्रा कहा जाता है। छर्रा को पाटी के उपर 2 से 4 ईच के अतराल में बिछाया जाता है और मोहलाईन छाल या कील के द्वारा उसे बांध दिया जाता है।

ग्रामीण परिवेश में छर्रा के उपर घास-फूंस या मिट्टी की स्वनिर्मित लाल खपरैल को एक पंक्ति में बिछाया जाता है। जिससे पानी आवास के भीतर प्रवेश न कर सके और छत पर गिरने वाला पानी खपरैल की नालीनुमा धार से नीचे गिर सके। इस प्रकार आवास का मूल ढांचा तैयार हो जाता है। राजगोंड जनजाति में इनके आवास में प्रवेश द्वार या दरवाजे अधिकांशतः उत्तर या दक्षिण दिशा में रखना शुभ माना जाता है। घर का ढांचा तैयार हो जाने के उपरांत महिलाओं का कार्य उसकी छबाई/लिपाई करने का होता है। घर की बाहरी दिवाल को लाल मिट्टी से लिपाई की जाती है वहीं भीतरी दिवाल की छबाई काली मिट्टी से की जाती है। कच्चे आवासो की फर्श की छबाई काली मिट्टी से की जाती है। इसी समय हाथ की उंगलियों की सहायता से अर्द्धगोलाकार रेखीय कलाकृति बड़े ही कलात्मक रुप से अंकित की जाती है। उसकी प्रतिदिन लिपाई गाय के गोबर से की जाती है।

गृहप्रवेश के पूर्व इनके द्वारा माझी के माध्यम से भीतर घर या डूमा घर मे पूर्वज देव, गोत्र देव, ईष्ट देव की विधिवत पूजा अर्चना कर मुर्गी/मुर्गा की पुजेई दी जाती है। तत्पश्चात ही घर में रसोई जलती है।

इनके आवास दो भागों में विभक्त होते है - पहला आंगन से लगी हुई परछी या बरामदा तथा दूसरा भाग आवश्यकतानुसार कमरों के निर्माण का होता है। इनमें आवास में कमरो की संख्या दो से तीन होती है। जिसमें एक कमरा भण्डारण और देवी-देवता के स्थान हेतु निर्धारित होता है जिसे भीतर घर कहा जाता है। इनके आवासो में रसोई का स्थान अन्य कमरे में होता है। जहां एक कोने में मिट्टी की स्वनिर्मित चुल्हा रखी जाती है, जिसमें ईंधन के रुप में लकड़ी का उपयोग होता है। इनके रसोई घर में चुल्हे के पास ही 2-3 फीट लंबा और $1^{1/2}$ से 2 फीट चौड़ा एक चबुतरा बना होता है जिसमें खाना बनने के बाद बर्तन को रखा जाता है। इसी कमरे मे पीने व भोजन बनाने हेतु पानी, रसोई उपयोग बर्तन, खाद्य सामग्री, मसाले आदि रखे जाते है। ग्रामीण क्षेत्रों में ठंड और वर्षाकाल में रसोई या परछी में ही भोजन किया जाता है। अन्य कमरे में शयन तथा दैनिक उपयोग की वस्तुएं जैसे कपड़े व अन्य वस्तुएं रखने हेतु उपयोग किया जाता है। सामान्यतः घर के पीछे भाग में मौसमी साग-भाजी उगाने के लिए बाड़ी होती है।

राजगोंड जनजाति में आवास संबंधी विवरण -

क्र.	विवरण	स्थानीय नाम
1.	घर	घर
2.	कमरा	कमरा
3.	रसोई घर	राधला घर
4.	पूजा घर	पूजा घर /देवता गुड़ी
5.	देवता गुड़ी	देवता घर
6.	कोठा घर	ग्वाल
7.	माईगुड़ी	देवता गुड़ी
8.	बकरी घर	छेल ग्वाल
9.	मुर्गी घर	मुरगी ग्वाल
10.	सुअर घर	घूसरा ग्वाल
11.	भेड़	भेड़ी ग्वाल

राजगोंड जनजाति में आवास के स्वामित्व की स्थिति -

क्र .	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	स्वयं का	101	100.00
2	स्वयं का नहीं	0	0.00
योग		101	100.00

सर्वेक्षित परिवारों में आवास का प्रकार

क्र .	आवास प्रकार	आवास संख्या	
		संख्या	प्रतिशत
1	कच्चा	70	69.31
2	पक्का	5	4.95
3	अर्धपक्का	26	25.74
योग		101	100.00

सर्वेक्षित परिवारों में आवास में कक्षो की संख्या

क्र•	विवरण	आकार	
		संख्या	प्रतिशत
1	1 कक्ष	13	12.87
2	2 - 3 कक्ष	67	66.34
3	4 -5 कक्ष	19	18.81
4	5 से अधिक	2	1.98
	योग	101	100.00

आवास में बाड़ी की उपलब्धता

क्र .	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	बाड़ी है	58	57.43
2	बाड़ी नहीं	43	42.57
योग		101	100.00

आवास का स्वरुप

क्र .	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	योजना का है	16	15.84
2	योजना का नहीं	85	84.16
योग		101	100.00

अध्याय 04
भौतिक संस्कृति

जनजातीय जीवन उनके पारम्परिक व्यवहार पर आधारित होता है। इनके द्वारा अधिकांशः परम्परागत रुप से उपलब्ध वस्तुओं, उपकरणों, पद्धतियों का उपयोग अपने दैनिक जीवन में श्रृंगार, रसोई या घरेलु कार्य, कृषि, शिकार, वनोपज संकलन, धार्मिक जीवन आदि में किया जाता रहा है। इनके परम्परागत संसाधन भी इन्हें एक विशिष्ट पहचान दिलाते है। जनजातियों में आधुनिकीकरण का प्रभाव भी इनके जीवन में अपेक्षाकृत कम दिखता है।



राजगोंड जनजाति की परम्परागत भौतिक संस्कृति पर वर्तमान समय में शिक्षा, परसंस्कृतिकरण एवं आवश्यकताओं में हुए परिवर्तनों आदि कारणों का प्रभाव दिखाई देता है। जिससे यह समुदाय भी अन्य जनजातियों की भांति आधुनिक वस्तुओं के प्रति भी आकर्षित दिखाई देते है।

वेशभूषा एवं साज-श्रृंगार

वयस्क स्त्रियां पूरी लम्बाई का (कमर पैर के टखने से थोड़ा उपर) एक लुगा या कपटा (साड़ी) पहनती है। श्रृंगार में जुड़े में कोसा, कान के उपरी भाग में बाली, कान के निचले भाग में जुल्पी, नाक के मध्य भाग में डोड़ी, नाक पर दाये एवं बाये ओर गुना, गले में खोगला, टोंगादान/सिकादान, बांह में बंहटा, कलाई में गुजेर, माटी, हाथ की उंगलियों में छतर, कमर में गुंची, पैर में पैरी, पैर की उंगलियों में मुंदी, चुटकी, धारण करती है। राजगोंड जनजाति में विवाहित महिलाओं द्वारा नाक के मध्य में सोने की डोड़ी पहनना विशेष पहचान है।



पुरुष वर्ग सिर पर केश को ढकते हुए पगड़ी, पाक या झुड़ी, गले में चंदर, कलाई में बला, कान में फूली (तौल कान), कमर मे ओंटा डोर श्रृंगार के रुप में तथा कुर्ता एवं धोती धारण करते है। वर्तमान में महिला एवं पुरुष वर्गो द्वारा आधूनिक वस्त्रों एवं श्रृंगार प्रसाधनों का भी रुचि अनुसार उपयोग किया जाता है।

गोदना -

राजगोंड जनजाति में महिलाएं परम्परागत रुप से गोदना गुदवाती है। इनके द्वारा गोदने को स्थायी आभूषण माना जाता है जो इनके सौंदर्य को बढ़ाने के साथ-साथ इनकी आदिम कला के माध्यम से धार्मिक -सामाजिक आस्था की संस्कृति को भी परिलक्षित करता है। इनमें विवाह पूर्व गोदना कराये जाने को सामाजिक रुप से अच्छा माना जाता है। महिलाओं द्वारा शरीर के विभिन्न अंगो यथा गले और वक्ष के मध्य भाग, बांह, कलाई, हथेली के उपरी भाग, पैर एवं पंजे के उपरी भाग में गोदना कराया जाता है। गोदना चटर पतर, फूल, रुपाफल, चेहरी, डोरी, कोपर, बांहा, हथली, झोरा, फूलबंदी और पुचका आदि रुप में गुदवाया जाता है।











राजगोंड जनजाति में महिलाओं की श्रृंगार सामग्री एवं धारित स्थान का विवरण निम्नांकित है -

क्र.	स्थानीय नाम	सामग्री	उपर्युक्त धातु	धारित स्थान या उपयोग
1.	फूल गुना	फूली	सोना	नाक
2.	मूंदी	बाली	सोना	कान
3.	चूड़ी	चूड़ी	कांच, अन्य धातु	कलाई
4.	मुंदी / मुंदरी	अंगूठी	सोना, चांदी	हाथ की उंगली
5.	बाली, करनफूल, झोलपा	बाली	सोना	कान
6.	डोड़ी, खूंटीगूना	नथनी	सोना	नासिका के मध्य भाग
7.	खोगला	सूता	चांदी	गला
8.	बरतडोर	-	रेशम धागा	गला
9.	बहोटा	पहुंची	चांदी	बांह
10.	गोडसाटी	पायल	चांदी, गिलट	पैर
11.	चैन	चैन	चांदी, गिलट	गला
12.	झरागूना	फूली	सोना	नाक
13.	किलिप	कीलिप	चांदी या अन्य धातु	केश
14.	टोंगादान	रुपया माला	धातु के सिक्के एवं काला रेशम धागा	गला
15.	बेछवा, चुटकारी	बिछिया	चांदी	पैर की उंगली
16.	लेवन टू	रबर बैण्ड	-	केश की चोटी

घरेलु उपकरण -

घरेलु उपकरणों में खाना पकाने मिट्टी निर्मित चुल्हे का उपयोग किया जाता है जिसमें लकड़ी का उपयोग ईंधन के रुप में किया जाता है। आग जलाने या फूंकने के लिए सोरेन, मुंग दाल रखने भुगा, अन्न या अन्य साग भाजी रखने चुरकी, चांगरी, कुईल, चोखनी, टोपा, मांसाहार बनाने के लिए कोर्री, साग-भाजी काटने पोनकी (हसिया) का उपयोग किया जाता है। पकी हुई दाल निकालने पीतल का पात्र जिसे डुआ तथा लकड़ी निर्मित बेला उपयोग मे लाते है। मछली सुखाने चालनी, बांस की काड़ी या बांस की पतली-पतली लकड़ियों का गुच्छा जिसे सिकुन कहा जाता है का उपयोग लाई फोड़ते समय हाण्डी में चलाने के लिए परम्परागत रुप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त आधुनिक घरेलू सामग्रियों में एल्युमिनियम एवं कांसा धातु के बर्तनों जैसे पराट, थाली, गिलास, लोटा आदि बैठने हेतु पीड़ा, चाटी का भी उपयोग आवश्यकतानुसार किया जाता है।









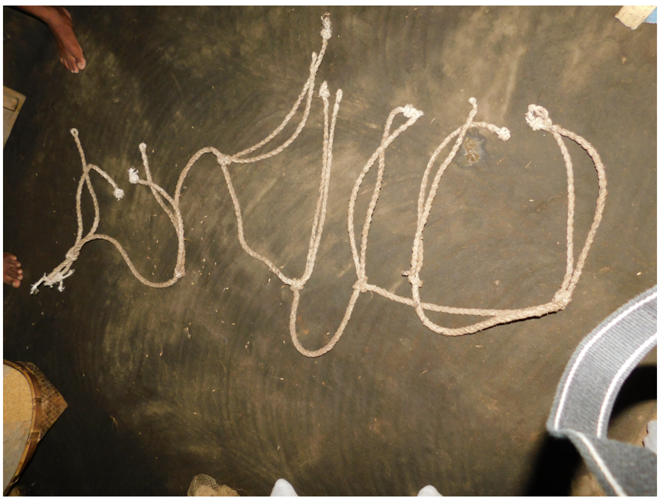
कृषि उपकरण

इनमें कृषि उपकरणों में भूमि की जुताई के लिए नांगर, जुताई उपरांत मिट्टी फोड़ने या जमीन समतल करने पराट (कोपर), फसल कटाई के बाद धान को अलग करने बेलन, मिंसाई के लिये 5, 7 या 9 मवेशियो के समूह को एक साथ बांधने हेतु डोगा (दौरी), फसल लाने या समान ढोने बैलगाड़ी, खेतों से धान की कटी फसल या घास लाने सुर, तथा घर में धान को रखने के लिए रस्सी पूरा, बांस पूरा, कोठी आदि के साथ-साथ कृषि कार्य में कुदाली, रांपा, गैंती, ईला (हसिया), टांगी आदि का उपयोग परम्परागत रुप से किया जा रहा है।









शिकार उपकरण

शिकार उपकरणों में टांगी, बागूर (जाल), फांदा, चोरिया, कुमनी, कुगली, भिटक, वंशी पिलना जाल, गरी, कोडा आदि का उपयोग किया जाता था। वर्तमान में शिकार पर प्रतिबंध के कारण अनुष्ठानों अथवा धार्मिक मान्यता अनुरुप सांकेतिक रुप से उपलब्धतानुसार छोटे जंगली जानवरों का शिकार किया जाता है। मत्स्य आखेट हेतु चोरिया, कुमनी, कुगली, भिटक, वंशी पिलना जाल, गरी, कोडा आदि का उपयोग किया जाता है। वाधयंत्रों में इनके द्वारा ढोल, मांदर, मंजीरा, टिमकी, गोला, मृदंग आदि वाद्ययंत्रों का उपयोग विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक, धार्मिक, उत्सवों आदि में नृत्य-संगीत हेतु किया जाता है।






अध्याय 05
आर्थिक जीवन

जनजातीय समाजों की अर्थव्यवस्था, जीविका निर्वाह की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति पर आधारित होती है। जीवनयापन एवं जीवन उपयोगी वस्तुओं के संकलन की व्यवस्था अर्थव्यवस्था के रुप में दृष्टिगत होती है। कोई भी जनजातीय समाज किसी एक अर्थव्यवस्था पर केन्द्रीत नही होता वरन् विभिन्न अर्थव्यवस्था का सम्मिश्रण उनके जीवन में होता है। फोर्ड एवं हर्स्कोविट्स (1952) द्वारा जनजातीय अर्थव्यवस्था को पांच रुपों में विभाजित किया गया है -

1. संग्रह
2. आखेट
3. मत्स्य संग्रहण
4. कृषि एवं
5. पशुपालन

उपरोक्त व्यवस्था जनजातीय समाज के सामाजिक स्तर तथा उनके क्षेत्र के आधार पर परिवर्तनशील है। छत्तीसगढ़ राज्य में राजगोंड जनजाति अपने क्षेत्र में एक सम्पन्न एवं प्रभुजाति के रुप में निवासरत है। अतः ये स्थायी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का परिपालन करते है। स्थायी अर्थव्यवस्था के रुप में इनका प्राथमिक व्यवसाय कृषि आधारित होता है। अधिकांश परिवार कृषि भूमि धारक है। वर्तमान में इनके द्वारा परम्परागत कृषि पद्धति के साथ-साथ आधुनिक कृषि पद्धति के माध्यम से कृषि की जाती है। ये प्रायः खरीफ फसलों में धान के साथ-साथ, मक्का, कोदो, कुटकी, ज्वार तथा दलहन आदि की खेती करते है। कई उन्नत कृषक परिवारों द्वारा रबी की फसल भी ली जाती है जिसमें धान, गेंहू, चना, सोयाबीन आदि शामिल है।

प्रमुख फसल चक्र -

बीज बोना - क्षेत्र में निवासरत राजगोंड समुदाय मानसूनी वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर है। जिसमें अधिकांश परिवार धान की फसल लेते है। वर्षा आधारित कृषि में कृषि का समय 3-4 माह का होता है। उक्त अवधि में जेठ (जून) से आषाढ़ (जुलाई) माह में खेतों की जुताई कर बीज बोया जाता है। जुताई एवं बीज बोने का समय 15 दिवस का होता है। प्रायः जुताई परम्परागत स्थायी हल-कृषि द्वारा किया जाता है, किन्तु कुछ उन्नत कृषक परिवार आधुनिक उपकरणों के माध्यम से भी बीज बोने का कार्य कर रहे है।







निंदाई - धान के पौधे जब 1-2 फीट के हो जाते है तब इनके साफ-सफाई हेतु सावन (जुलाई-अगस्त) से भादो (अगस्त-सितम्बर) माह में खेतों की निंदाई की जाती है। जिसमें अनावश्यक उगे हुये अन्य पौधों को पृथक कर धान को एक व्यवस्थित क्रम दिया जाता है। साथ ही कीटनाशक व उर्वरक का प्रयोग भी इसी अवधि में किया जाता है। हॉलाकि कीटनाशकों एवं उर्वरकों का उपयोग बहुतायत में कम ही किया जाता है।

कटाई तथा मिंजाई - सामान्यतः कृषकों द्वारा परम्परागत रुप से देर से पकने वाले बीजों का प्रयोग किया जाता है किन्तु वर्तमान में कृषकों द्वारा संकर बीज जिनके तैयार या पकने की अवधि अपेक्षाकृत कम होती है ऐसे बीजों का उपयोग किया जा रहा है। परम्परागत बीज क्वार-कार्तिक (अक्टूबर-नवम्बर) माह में तैयार होते है इन फसलों की कटाई कर खलिहानों में लाकर परम्परागत बेलन, दौरी पद्धति के माध्यम से मिंसाई का कार्य किया जाता है कृषि उपजों के भण्डारण के पश्चात आने वाले वर्ष में बोआई हेतु बिजहा धान पृथक कर शेष धान को स्वयं उपभोग हेतु रखा जाता है ।

सर्वेक्षित राजगोंड जनजाति परिवारों में भूमि धारिता

क्र .	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	भूमिहीन	5	4 .95
2	भूमिधारक	96	95 .05
योग		101	100 .00

सर्वेक्षित राजगोंड जनजाति परिवारों में भूमि धारिता

क्र .	विवरण (एकड़ में)	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	1 एकड से कम	3	3 .13
2	1 -2 एकड़	18	18 .75
3	2-4 एकड़	29	30 .21
4	4-6 एकड़	23	23 .96
5	6 एकड़ से अधिक	23	23 .96
योग		96	100 .00



राजगोंड जनजाति द्वारा उत्पादित फसलों एवं फसल उत्पादन के माह

क्र.	उत्पाद	स्थानीय नाम	संकलन का समय / माह
1.	धान	धान	नवम्बर - दिसम्बर
2.	मड़िया	माड़िया	नवम्बर - दिसम्बर
3.	कोदो	कोदो	नवम्बर - दिसम्बर
4.	कुटकी	कुटकी	नवम्बर - दिसम्बर
5.	बटरी	बटरी	जनवरी - फरवरी
6.	दाल (लाखड़ी, गोलदाल, बोर्रा चना, चपटा चना, अरहर दाल)	दाल (लाखड़ी, गोलदाल, बोर्रा चना, चपटा चना, अरहर दाल)	जनवरी - फरवरी
7.	साग भाजी	करेला	मौसम आधारित
		भाटा	
		चेंच भाजी	
		पालक भाजी	
		लाल बहल भाजी	
		कोलयारी भाजी	
		पुंजेर भाजी	
		लौकी	
		टमाटर	
		भिंडी	
		कुमड़ा	

वनोपज संग्रह -

राज्य में राजगोंड जनजाति का एक बड़ा भाग शहरी सभ्यता से दूर वन, पहाड़ी क्षेत्रों के मध्य निवास करता है। वनाच्छादित क्षेत्रों में इनका जीवन मुख्य रुप से वन आधारित होता है जहां तेन्दूपत्ता, महुआ, सरई फूल, चिरौंजी, करील, फूटू (मशरुम), बोड़ा, मौसमी भाजी आदि का संकलन परिवार के छोटे-बड़े सदस्यों के साथ किया जाता है। तेंन्दुपत्ता, महुआ, साल-बीज आदि को प्रायः विक्रय कर पारिवारिक आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। वहीं दैनिक उपयोग हेतु जलाऊ लकड़ी का संग्रहण भी वनों पर ही निर्भर करता है।



राजगोंड जनजाति द्वारा संकलित वनोपज एवं संकलन का समय

क्र.	वनोपज	स्थानीय नाम	संकलन का समय / माह
1.	महुआ	महुआ	मार्च-अप्रैल
2.	तेंदु	तेंदु	मार्च-अप्रैल
3.	चना	चना	मार्च-अप्रैल
4.	तेंदु पत्ता	तेंदुपत्ता	अप्रैल- मई
5.	सरई बीज	सरगीफाल	अप्रैल -मई
6.	इमली	इमली	अप्रैल - मई
7.	आम	आम	अप्रैल -मई
8.	जामुन	चिरईजाम	अगस्त-सितम्बर
9.	अमचूर	आमछोला	मई-जून

वनोपज संकलन में संलग्न सर्वेक्षित परिवारों का विवरण

क्र .	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	संलग्न	48	47.52
2	संलग्न नहीं	53	5 2.48
योग		101	100.00

शिकार / मत्याखेट -

पूर्व में राजगोंड जनजाति के सदस्यों द्वारा भोजन में मांसाहार का अधिक उपयोग किया जाता था, जिसके लिए जंगली जानवरों का शिकार व्यक्तिगत या समूह के रुप में किया जाता था। वर्तमान में शिकार धार्मिक मान्यता को पूर्ण करने के उ`श्य से केवल सांकेतिक रुप से किया जाता है तथा बाड़ी से साग-भाजी एवं खेतों की फसल की सुरक्षा के उद्देश्य से छोटे जीव-जन्तुओं एवं पक्षियों का शिकार पारम्परिक शिकार उपकरणों के द्वारा करते है। वहीं वर्षाकाल में छोटे जल स्त्रातों, नदियों व तालाबों से परम्परगत उपकरणों जैसे - चोरिया, गरी, आदि का उपयोग कर छोटी बड़ी मछलियों का आखेट भी अर्थ संचय अथवा स्वयं के उपभोग के उद्देश्य से किया जाता है।



पशुपालन –

राजगोंड समुदाय की अर्थव्यवस्था में पशुपालन का भी विशिष्ट महत्व दिखाई देता है। अधिकतर परिवारों में एक ओर कृषकीय उददेश्यों की पूर्ति हेतु गाय, बैल, भैंस पाला जाता है, वही दूसरी ओर धार्मिक कर्मकाण्ड में पुजेई, सामाजिक भोज, अतिथि सत्कार एवं व्यक्तिगत उपभोग एवं अर्थोपार्जन की दृष्टि से बकरा, बकरी, मुर्गी, सुअर आदि का भी पालन किया जाता है।







सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में पशुपालक परिवारों का विवरण निम्नांकित है -

क्र .	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	55	54 .46
2	नहीं	46	45 .54
योग		101	100 .00

उपरोक्त तालिका अनुसार सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में से 54.46 प्रतिशत (N=55) परिवारों द्वारा मांस, दूध, कृषि उददेश्य व सामाजिक कार्यो की पूर्ति हेतु` विभिन्न प्रकार के पशुओं का पालन किया जाता है। वहीं शेष 45.54 प्रतिशत (छ=46) परिवारों का पशुपालन में संलग्नता नही है।

54.46 प्रतिशत पशुपालक परिवारों द्वारा विभिन्न उद्देश्यों से पशुओं का पालन करते है पशुओं के स्थानीय नाम निम्नांकित है -

राजगोंड जनजाति के पालतु व उपयोगी पशु व उनके नाम

क्र.	पशु	स्थानीय नाम
1.	गाय	गाय
2.	बैल	बुईल
3.	भैंस	भैंस
4.	बकरी	छेल
5.	मुर्गी	कुकरा
6.	बकरी के बच्चे	छेल पीला
7.	मुर्गी के बच्चे	चेंव

मजदूरी

राजगोंड जनजाति जहां एक ओर परम्परागत रुप से मिश्रित अर्थ व्यवस्था के साधन जैसे - कृषि, वनोपज, पशुपालन के द्वारा अपने आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करते है वहीं गैर कृषक समुदाय अथवा कृषि कार्य से विमुक्त होकर परिवारों के सदस्य खेतीहर निजी मजदूरी, अन्य निजी मजदूरी व समय-समय पर प्राप्त होने वाले शासकीय मजदूरी का भी कार्य कर पारिवारिक अर्थव्यवस्था में अपनी सहभागिता देते है। वर्तमान में कुछ राजगोंड परिवारों के सदस्य शासकीय सेवाओं में भी अपना प्रतिनिधित्व कर रहे है।

उपरोक्त माध्यमों से एक राजगोंड परिवार अपना जीवन यापन करता है तथा आश्यकतानुसार एक पूर्ण वर्ष में एक या एक से अधिक अर्थोपार्जन में साधनो में संलग्न होकर अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

सर्वेक्षित राजगोंड जनजाति द्वारा विगत वर्ष में कृषि या कृषि से जुड़े कार्यो एवं शासन द्वारा रोजगार उन्मुखी कार्यो में परिवार के कार्यशील सदस्यों द्वारा श्रम कर परिवार के अर्थ संग्रहण में सहयोग दिया गया है। विभिन्न कार्यो में परिवार की संलग्नता, विगत वर्ष में परिवार द्वारा अर्जित किये गये आय एवं मद विशेष आय के स्त्रोत से प्रति परिवार औसत आय का विवरण निम्नांकित है -

क्रं	स्त्रोत	संलग्न परिवार		वार्षिक आय	प्रति परिवार औसत वार्षिक आय
		संख्या	प्रतिशत		
1	कृषि कार्य	96	95.05	3072330	32003
2	वनोपज संकलन	48	47.52	291700	6077
3	पशुपालन	45	44.55	20000	444
4	कृषि मजदूरी	97	96.04	962100	9919
5	मनरेगा	72	71.29	1708040	23723
5	शासकीय सेवा / सेवा	1	0.99	200000	200000
5	अन्य / व्यवसाय / पेंशन	4	3.96	26600	6650
कुल सर्वेक्षित परिवार - 101					

उपरोक्त तालिका से दर्शित है कि, 95.05 प्रतिशत परिवार कृषि कार्य में संलग्न है जिससे उनकी कुल वार्षिक आय रुपये 3072330 प्राप्त हुई है इस प्रकार कृषि कार्य में संलग्न परिवारों को राशि रुपये 32003 प्रति परिवार औसत वार्षिक प्राप्त होती है।

वनोपज संकलन में 47.52 प्रतिशत परिवार संलग्न है जिससे प्रति परिवार 6077 रुपये प्रति परिवार औसत वार्षिक आय प्राप्त हो जाती है।



वहीं कृषि काल में कृषि मजदूरी में संलग्न 96.04 प्रतिशत परिवारों को प्रति परिवार औसत 9919 रुपये वार्षिक प्राप्त होती है।

शासन द्वारा ग्राम स्तर पर रोजगार गारंटी के कार्य भी राजगोंड निवासित ग्रामों में संचालित है जहां इन्हें वर्ष में 100 दिवस का रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। सर्वेक्षित परिवारों में 71.29 प्रतिशत परिवार के न्यूनतम 01 सदस्य द्वारा मनरेगा अन्तर्गत कार्य किया गया । इस प्रकार इन्हें प्रति परिवार 23723 रुपये औसत वार्षिक आय की प्राप्ति हुई है।

सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में से केवल 01 परिवार का सदस्य शासकीय सेवा / अन्य सेवा में संलग्न है तथा 3.96 प्रतिशत परिवार की वार्षिक आय पेंशन, व्यवसाय व अन्य कार्यों में संलग्नता पर निर्भर है।

समस्त स्रोतों से वार्षिक आय का वितरण -

क्र.	आय का वितरण (रुपये में)	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1.	0 - 5000	1	0.99
2.	5000 - 10000	0	0.00
3.	10000 - 20000	7	6.93
4.	20000 - 30000	8	7.92
5.	30000 - 50000	46	45.54
6.	50000 - 60000	14	13.86
7.	60000 से अधिक	25	24.75
कुल सर्वेक्षित परिवार - 101			

BPL एवं APL श्रेणी के परिवार –

शासन द्वारा देश के नागरिकों को आर्थिक, स्वास्थ्य व शिक्षा आदि के क्षेत्र में सहायता पहुंचाने के उ`श्य से विभिन्न प्रकार के कार्ड जारी करती है। इन्ही उद्देश्यों में सरकार द्वारा खाद्य सुरक्षा योजना के तहत परिवारों को राशन कार्ड जारी किये जाते है। जिसके तहत राज्य शासन द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से जनता उचित मूल्य पर राशन व अन्य खाद्य सामग्री खरीद सकती है।

राज्य शासन द्वारा राशन कार्ड जारी करने के दो स्तर निर्धारित किये गये है। एक है गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार जिन्हें BPL श्रेणी के राशन कार्ड जारी किये जाते है वही दूसरा है गरीबी रेखा से उपर वाले परिवार जिन्हें ।APL राशन कार्ड के माध्यम से उचित मूल्य पर प्रतिमाह राशन उपलब्ध कराया जाता है।

सर्वेक्षित 101 राजगोंड परिवारों में से 95 परिवारों को शासन द्वारा खाद्यान्न प्रदाय योजना अन्तर्ग BPL एवं APL श्रेणी के राशन कार्ड जारी किये गये है उक्त परिवारों का विवरण निम्नांकित है –

क्र.	विवरण	परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	APL	7	7.37
2	BPL	88	92.63
योग		95	100.00

उपरोक्त तालिका अनुसार सर्वेक्षित राजगोंड परिवारों में से 92.63 प्रतिशत (N=88) परिवार गरीबी रेखा से नीचे (BPL) श्रेणी में है तथा केवल 5.00 प्रतिशत (N=07) परिवार ही गरीबी रेखा से उपर (APL) जीवन यापन कर रहे है।

राजगोंड जनजाति में शासकीय योजनाओं से लाभान्वयन की स्थिति
कृषि विकास संबंधी शासकीय योजनाओं से लाभान्वयन की स्थिति

क्र.	योजना	संलग्न परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
4	वन अधिकार मान्यता पत्र	100	99.01
5	भूमि सुधार / समतलीकरण	2	1.98
4	खाद्य-बीज वितरण	5	4.95
	सिंचाई संसाधन	100	99.01
कुल सर्वेक्षित परिवार - 101			

अन्य शासकीय योजनाओं से लाभान्वयन की स्थिति

क्रं	योजना	संलग्न परिवार	
		संख्या	प्रतिशत
1	राशन कार्ड	95	94.06
2	बैक खाता	97	96.04
3	स्मार्ट कार्ड	41	40.59
4	आधार कार्ड	100	99.01
5	उज्जवला योजना (LPG)	4	3.96
कुल सर्वेक्षित परिवार - 101			

अध्याय 06
जीवन संस्कार

जनजातियों का संपूर्ण जीवन उनके तीन मूलभूत संस्कारों यथा जन्म, विवाह एवं मृत्यु पर केन्द्रीत होता है। इन्हीं संस्कारों के मध्य इनके सामाजिक सांस्कृतिक क्रियाकलापों की एक विशिष्ट संस्कृति इन्हें अन्य दुसरे समाजों से पृथक एक विशिष्टता प्रदान करती है। जनजातियों में जन्म एवं मृत्यु को प्रकृति का नियम माना जाता है। वही विवाह को एक अनिवार्य संस्कार के रुप में परिभाषित किया जाता है जो एक कुटुम्ब का निर्माण कर वंश वृद्धि का मान्यता प्राप्त स्वरुप है। जिसका मुख्य उददेश्य समाज की निरंतरता को बनाये रखना है।

जन्म संस्कार -

राजगोंड जनजाति में जन्म को जीव की उत्पति माना जाता है। जहां जीव की उत्पत्ति पुर्नजन्म की अवधारणा है। इनमें किसी शिशु के जन्म को पूरखा या पूर्वज या डूमा का परिवार में पुनः वापस आना माना जाता है। पूर्वज या डूमा आने का पूर्वानुमान भी इनमें गर्भावस्था में ही लगाया जाता है।

राजगोंड जनजाति में सामान्यतः विवाहित स्त्री के मासिक धर्म के रुकने को गर्भ ठहरना या गर्भधारण माना जाता है। इनके द्वारा किसी स्त्री का मासिक धर्म 1-3 माह रुकने पर स्त्री के चेहरे का रंग बदल जाना अर्थात सामान्य अवस्था की तुलना में निखार आना, खाने-पीने की इच्छाओं में परिवर्तन होना, उल्टी होना आदि लक्षणों के आधार पर उसे गर्भवती होना माना जाता है। यह लक्षण 4 से 8 माह के गर्भकाल में निरंतर कम हो जाते है। लक्षणों के दिखने पर सिरहा द्वारा स्त्री की नाड़ी देखकर उसके गर्भधारण की पुष्टि की जाती है। गर्भावस्था के दौरान गर्भवती स्त्री द्वारा खाने-पीने की चीजों की इच्छा के आधार पर परिवार के डूमा (पूर्वज) की पसंद का अनुमान लगाया जाता है। जैसे यदि कोई स्त्री सामान्यतः मंद का सेवन नही करती रही हो किन्तु गर्भकाल में उसके द्वारा मंद पीने इच्छा जताई जाती है तो माना जाता है कि यह वह पूर्वज है जिसे मंद प्रिय था। ऐसी स्थिति में महिला को मंद दिया जाता है अथवा मंद उसके पैर पर तर्पण कर भी डूमा की इच्छा पूर्ण करना माना जाता है।

राजगोंड जनजाति में प्रसव कराने का कार्य सुतरैन बुढ़ी के द्वारा किया जाता है। गर्भधारण के 7-8 माह हो जाने पर सुतरैन बुढ़ी द्वारा महिला के गर्भ का परीक्षण समय-समय पर किया जाता है। जिसमें महिला के गर्भ में शिशु की स्थिति, गर्भ के पानी जिसे पेनघरा कहा जाता है कि अपने अनुभव के आधार पर जांच की जाती है। महिला को प्रसव पीड़ा प्रारंभ होने पर सुतरैन पेनघरा (गर्भ पानी) की परीक्षण अपने अनुभव के आधार पर करती हैं। इसके रिसाव को बरसा हला कहा जाता है तथा शिशु का सिर योनी द्वार पर आ जाने पर प्रसव की तैयारी की जाती है। इसके लिए परिवार की अन्य महिलाएं स्त्री को रसोई और डूमा घर से पृथक एक अन्य कक्ष में लेकर जाती है। प्रसव कार्य में उपयोगी गर्म पानी, कपड़े, छुरी, खपरा (मिटटी का बना हुआ कवेलु), धागा आदि सामग्री की व्यवस्था कर ली जाती है।

महिला को प्रसव कक्ष में जमीन पर ही लेटाया जाता है। जब शिशु पूर्ण रुप से गर्भ के नीचे आ जाता है तब सुतरैन बुढ़ी द्वारा महिला के पेट के उपरी भाग को दोनो हाथों से नीचे की ओर धकेला जाता है जिससे शिशु आसानी से गर्भ से बाहर आ सके। शिशु के गर्भ से बाहर आ जाने पर उसे पुराने सुती के कपड़ा से ढका जाता है। जिसे बहैन कहा



जाता है। इसके बाद सुतरैन बुढ़ी शिशु के नाक, कान और मुंह में फूंक मारती है ताकि उनमें कही गर्भ का पानी भरा न रह जाये। इसके बाद सुतरैन बुड़ी शिशु का नेलुआ (नाल) को 4 इंच की दूरी से ब्लेड की सहायता से काटती है। पूर्व में नाल लोहे की छुरी जिसे कर्री कहा जाता है को लीस कर (धार कर) या सफेद माली डोर से या काड़ (तीर) अथवा कमचील (बांस की पतली फली) से काटा जाता था। छुरी से नाल काटते समय नाल को एक मिट्टी के खपरे के उपर रखकर छुरी से काटा जाता था। नाल कटने के बाद शिशु के शरीर से जुड़े नाल के भाग में शीघ्र सूखने एवं घाव से बचने घी एवं हल्दी को मिलाकर लगाया जाता है।

प्रसव में शिशु के साथ आये शेष नाल को फूल कहा जाता है। फूल में बने ''गौएट'' (गांठ) के रंग एवं क्रम को देखकर दम्पत्ति की भविष्य में होने वाली संतानों का अनुमान लगाया जाता है। अर्थात् यदि फूल में कतार से 03 गठानें है तो माना जाता है कि दम्पत्ति को और 03 संताने प्राप्त होंगी। उक्त गांठ के क्रम में 1 काले रंग में तथा 2 सफेद रंग ही हुई तो माना जाता है कि दत्पत्ति को 1 पुत्र और 2 पुत्री संताने और जन्म लेंगी। सुतरैन इसे सेमी पत्ता या किसी पत्ते के दोना में रखकर घर के पीछे एक 2 फीट गहरे गड्ढे जिसे गोधना साल कहा जाता है में रख देती है, इसके उपर 03 केन्दु (तेंदु) की लकड़ी रखी जाती है जिसे एक पत्थर से ढ़क दिया जाता है। प्रसुता को छठ्ठी होने तक इसी स्थान पर बिठाकर नहलाया जाता है।

इसी स्थान के पास कुनला हाण्डी रखी जाती है, जिसमें प्रसुता एवं शिशु को छठ्ठी होने तक नहलाने गर्म पानी रखा जाता है। कुनला हाण्डी के टोटा (गर्दन) वाले भाग में कुंवारी धागे में 3 भेलवा, 5 कच्ची हल्दी बांधकर इसे 5 बार बांधा जाता है। ऐसा जच्चा एवं बच्चा को बुरी नजर से बचाने के लिए किया जाता है।

सुतरैन बुढ़ी और अन्य महिलाओं के द्वारा प्रसुता एवं शिशु को स्नान कराया जाता है। प्रसव के 12 घण्टे तक प्रसुता को भोजन नही दिया जाता है। बल्कि सुतरैन बुढ़ी के द्वारा उसे प्रसव में हुए रक्तहास की कमी को पूरा करने, शीघ्र स्वस्थ होने के लिए कसापानी एवं कसाडेड़ा प्रसूता को पीने के लिये दिया जाता है। कसापानी बनाने के लिए एक हाण्डी में गुड़, कुल्थी, हिरवा, सिंगकांदा और डुमाकांदा को पानी के साथ एक चौथाई होने तक उबाला जाता है। प्राप्त पेय को समधियान या विपरित गोत्रीय महिला द्वारा घी और लहसून से ''परजना'' (तड़का या बघारा) किया जाता है। एक अलग बर्तन में भुने हुए उसना चांवल एवं तिल को गुड़ के साथ मिलाकर ''लोड़ू'' (लड्डू) बनाया जाता है। जिसे ''कसा ढेड़ा'' कहते है। प्रसुता को 12 घण्टे के बाद खाने के लिए कसा ढेड़ा और पीने के लिए कसापानी दिया जाता है। प्रसुता को 2 दिवस के बाद ही अन्न या भात खाने में दिया जाता है।

प्रसव उपरांत माता के पहले दूध को मूढ़ी दूध कहा जाता है, इस दूध को शिशु को तुरंत नही दिया जाता है क्योंकि माना जाता है कि यह दूध बहुत मोटा होता है जिसे शिशु खींच नही पाता है और इसे पचा नही पायेगा। इस कारण इसे फेंक दिया जाता है या माता के ही कपड़े में पोंछ दिया जाता है। इसके बाद आने वाले पतले दूध को सर्वप्रथम डूमा में अर्पित करते है। माता के दूध आने को ''पना आना'' कहा जाता है। जिसके बाद ही शिशु को माता का दूध पिलाया जाता है। इस अवधि में यदि शिशु अधिक रोता है तो, उसे गाय के एक चम्मच दूध में एक चम्मच पानी मिलाकर उसे रुई में भीगोकर शिशु को चटाया जाता है।

प्रसुता एवं शिशु के उत्तम स्वास्थ्य के दृष्टि से प्रसुता को प्रसव के 2 माह तक उसना चांवल, बड़ी सब्जी, कुल्थी की दाल एवं कोतरी मछली की सब्जी प्रतिदिवस या एक दिवस के अन्तराल में उसके आहार में अवश्य दी जाती है।

शिशु की ''नेलुआ पोरना'' (नाल झड़ने) के पश्चात सातवें दिन ''नाधरा'' ''एकसिया'' (छठ्ठी) का कार्यक्रम किया जाता है। कुछ स्थितियों में यह कार्यक्रम 21 दिन में भी किया जाता है। इस दिन समधियान (विषम गोत्रीय सदस्य) के द्वारा ही शिशु का मुण्डन किया जाता है। इनमें गर्भ के केश को अशुभ माना जाता है अतः छठ्ठी के दिन शिशु के केश उतार दिये जाते है। मुण्डन के लिए शिशु की मां तुल्य रिश्ते की महिला यथा बुआ, मौसी, चाची, बड़ी मां उसे अपने गोद में बिठाकर शिशु के केश को गाय के दुध से भिगाकर मुण्डन करवाती है। शिशु के मुण्डन के केश और प्रसव के बाद से अब तक के मैले कपड़ो को गोधना साल में गाड़ दिया जाता है और इसी जगह शिशु की नाल को एक उंगली से गोधना साल में ही दबा दिया जाता है। इसके बाद इस स्थान को पूरी तरह पाट या ढक दिया जाता है। इसके बाद सुतरैन बुढ़ी शिशु को नहलाती है और उसके नानी पक्ष से लाये गये नये कपड़े पहनाती है।

घर के आंगन में अरवा चांवल के आटे से चौक पुरा (रंगोली जैसी आकृति बनाया) जाता है। इसके मध्य में एक कांसे के लोटे में धान भरकर उनके उपर एक चोखनी (मिट्टी की कटोरीनुमा पात्र) चांवल रख कर दिया कलश के रुप में जलाया जाता है। जिसे बना लिखना कहा जाता है। इस कलश के पीछे प्रसुता महिला को बिठाया जाता है, कलश और महिला के बीच में एक सुपा में 1/2 किलो धान, भात और एक आग की अंगेठी रखी जाती है। महिला अपने परिवार के गोत्र देव की संख्या के आधार पर एक, तीन, पांच मुठ्ठी चांवल और कुछ राशि रखती है। इसके बाद 07 समधियान महिला सदस्यों द्वारा माता की गोद में शिशु को दिया जाता है। इसी चांवल से शिशु और कलश को टीका (तिलक) लगाया जाता है। इसी समय डीहर परिहा (परिवार के गोत्र से पृथक 8-10 सदस्य मिलकर परिहा बनाते है) के द्वारा शिशु का नामकरण किया जाता है। जिसके लिए नाल झड़ने के बाद ही खरकार को शिशु के जन्म संबंधी जानकारी दी जाती है, जो अपनी परम्परागत संधारित पांजी देखकर पूर्वज के अनुमान से शिशु का नाम सुझाता है।

इसके बाद बुआ एक सिर को एक ओर घुमाकर जिससे उसकी नजर शिशु पर न पड़े इस स्थिति में चौक के पास आंचल रखकर बैठती है, जिसमें प्रसुता सामने रखे चांवल को उसके आंचल में डालती है। फिर प्रसुता उसे कुछ भेंट भी देती है।

महिला के सामने रखे सामान को गोधना साल के सामने रख दी जाती है। प्रसुता महिला इसके बाद उपस्थित सभी सदस्यों से आर्शीवाद लेती है और इसके बाद समाज को भोज कराया जाता है। परिवार के द्वारा सुतरैन और मुण्डन करने वाले सदस्य को कुछ भेट दी जाती है।

प्रसुता महिला 1 माह तक हाण्डी नही छुती अर्थात् रसोई कक्ष, पूजा घर और पीने अथवा भोजन पकाने का पानी लेने नही जाती है तथा इस अवधि में टेटकोने (परछी) के एक तरफ ही रहती है।

घरसवां -

एक माह के बाद जब वह शुध्दीकरण संबंधी स्नान कर आती है तब सुतरैन बुढ़ी प्रसुता महिला के उपर दूध पानी छिंडकती है। इसके बाद प्रसुता भी थोड़ा-थोड़ा गर्म पानी सुतरैन के उपर डालती है और शरीर में हल्दी तथा केश में मिट्टी





लगाती है। इस प्रकार प्रसुता तथा सुतरैन को प्रसव के दौरान अशुद्धि समाप्त होना माना जाता है। प्रसुता महिला सुतरैन की सेवा के रुप में उसे उसकी पसंद का भोजन खीर, पुड़ी, मांस-मछली आदि बनाकर प्रेम पूर्वक खिलाती है और आर्थिक स्थिति अनुसार कपड़े आदि भेंट करती है। इस दिन के पश्चात से प्रसुता महिला अपने सभी गृहस्थ कार्य प्रारंभ करती है।

गर्भावस्था एवं शिशु जन्म संबंधी अवधारणाएं

- गर्भावस्था की अवधि में महिला अपने दैनिक कार्य सामान्य रुप से करती है किन्तु इस अवधि में उसे भारी समान उठाने, नाव में नदी पार करना, कुछ विशेष वृक्षों की छांव में न जाना इत्यादि निषेधों का पालन करना होता है।
- राजगोंड जनजाति द्वारा प्रसव संबंध में एक मान्यता यह भी प्रचलित है कि, प्रसव आसानी से नही होने पर घर के बाहर के ओर की ''छान्ही'' (छत) पर बंधी रस्सी को खिंच कर तोड़ देने पर भी प्रसव में आसानी होती है।
- प्रसव सामान्य रुप से हो जाये तथा जच्चा-बच्चा स्वस्थ रहे। इसकी कामना के लिए परिवार के पुजारी द्वारा डुमा की पूजा की जाती है।
- राजगोंड जनजाति में यदि किसी शिशु का जन्म नियत समय के पूर्व गर्भावस्था के 7 वें माह में हो जाता है तो उसे अशुभ माना जाता है। इनकी मान्यता है कि 9 माह से पूर्व हुए प्रसव में शिशु में शारीरिक अपंगता होती है।
- इनके द्वारा उल्टा पैदा हुए शिशु अर्थात् पैर की ओर से जन्म लेने वाले शिशु को शुभ माना जाता है, इन्हें **''साल समिचे''** कहा जाता है। मान्यता अनुसार ऐसे शिशु के पैर के द्वारा एकांगी पीड़ा वाले व्यक्ति की पीड़ा दूर होती है।
- गर्भकाल में नजर लगने पर गर्भवती स्त्री को पेट, हाथ-पैर मे कुछ समस्या जैसे दर्द आदि होती है। इसके निवारण के लिए राजगोंड समुदाय में चांवल, फूल, सिंदूर, काला रंग (पीसा कोयला) को हाथ में लेकर सिर से पैर की दिशा में उतार कर ''डेला बांट'' (ग्राम के बाहर चौराहे) में फेंक दिया जाता है।

प्रसव उपरांत 12 घण्टे से अधिक समय पर भी यदि प्रसुता को दूध नही आता है, तो राजगोंड जनजाति में परम्परागत उपाय अपनाए जाते है जैसे -

1. महिला को कोतरी मछली पकाकर खिलाई जाती है।
2. केंचुएं को कोयले की आग में राख होने तक पकाया जाता है। अब इस राख को चुर्ण के रूप में कोकार बड़ी (रखिया बड़ी) या फूल बोरी की सब्जी में मिलाकर बिना प्रसुता की जानकारी में लाये खिलाया जाता है।
3. वैद्य द्वारा दूध मोंगरा जड़ी बूटी को भी औषधी के रुप में खिलाया जाता है।

बाल्यावस्था -

परिवार में किसी शिशु का जन्म उस परिवार मे एक नए सदस्य के आगमन के रुप मे होता है। इस समय परिवार के सभी वर्ग के सदस्यों का ध्यान उस नए सदस्य की ओर होता है और सभी उसे अपनी गोद में लेने के लिए अपनी बारी का इंतजार करने लगते है। इस प्रकार एक शिशु अपने रिश्तेदारों में अपने ज्येष्ठ या बड़े भाई-बहनों, चाचा-चाची, दादा-दादी के

स्नेह के मध्य बड़ा होता है। अपने बाल्यावस्था में कन्या या बालक अपने भाई-बहनों के साथ नित नये खेल-खेलना, माता-पिता के द्वारा किये गये कार्य और संस्कारों को सिखता है वही घर के दादा-दादी या बुजुर्ग सदस्यों से अपने कुल, वंश की कहानियों के द्वारा अपने इतिहास व पूर्वजों की रोचक जानकारियां प्राप्त कर लेता है। शिशु का बाल्यकाल प्रायः अनुसरण का समय होता है, जिसमें वे अपने परिवार के सदस्यों के आचरण व व्यवहार से अपनी अनौपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है।



कुड़ा बड़ा या सांकेतिक विवाह -

राजगोंड जनजाति में कन्या के विवाह के पूर्व एक अनिवार्य रस्म की जाती है, ि जसे ''कुड़ा बड़ा'' या ''काड़ा बरा'' कहा जाता है। कुड़ा बड़ा प्रायः कन्या के प्रथम र जस्वला होने के पूर्व 6-7 वर्ष की आयु में किया जाता है। यह एक प्रकार से विवाह पूर्व र स्म है जिसमें कन्या को विवाह अनुरुप हल्दी चढ़ाई जाती है। यह एकल रुप में या ामूहिक रुप से किया जाता है। कुड़ा बड़ा की रस्म परिवार में किसी के विवाह के समय या जीव-पानी लाने के समय भी किया जा सकता है। किसी घर में 10 वर्ष से कम उम्र की कन्या हो तो समाज में गोत्र के लोगो से चर्चा की जाती है सहमति होने पर जितनी भी कन्या इस उम्र में हो उनका सामूहिक रुप से कुड़ा बड़ा करने का निर्णय लिया जाता है। ए क ही मड़वा में सामूहिक कुड़ा बड़ा किया जाता है।

जिस भी घर से कन्या का कुड़ा बड़ा किया जाता है वहां प्रत्येक घर में 7 गीधा (1 गीधा = 1 पाव) अरवा चांवल दो हाण्डी में 3 : 4 के भाग में पृथक-पृथक डाल दिया जाता है इन हाण्डियों में अनुमान से 4-5 गांठ हल्दी डाल दी जाती है। परिवार के मुखिया या पुजारी के द्वारा इसकी पूजा-पाठ कर हाण्डी में भिगोया जाता है। जिसे **''चउलफूला''** कहा जाता है। इस क्रिया के बाद संबंधियों को भोजन कराया जाता है।

दूसरे दिन ''ठेंगवेन नानी'' जिनका कुड़ा बड़ा हो चुका है ऐसी कुंवारी कन्याओं के द्वारा चउलफूला को पृथक-पृथक कुंटा (पीसा) जाता है। दिन चढ़ने के बाद समाज के लोग एकत्र हो जाते है और ''तेलन'' (एक मिट्टी की कढ़ाई) में तेल डालकर उसमें पीसी हल्दी और चांवल में तिल डालकर मिलाया जाता है और इसकी लोई बना ली जाती है। इसके बाद एक चुल्हे में पानी भरी हाण्डी रखकर उसे सरई या सिहाड़ी पत्ते से ढककर उसे बाबे की रस्सी से बांध दिया जाता है और इस पत्तों में भाप निकलने के लिए छोटे-छोटे छिद्र कर दिये जाते है। इसके उपर हल्दी-चांवल की लोई को छोटी-छोटी रोटी बनाकर रखा जाता है जिसे पीपल के पत्ते में तेल डालकर ढ़क दिया जाता है तथा कुछ-कुछ समय में इसे देख कर पुष्टि की जाती है कि कही ये फट तो नही रहे है। रोटी के पक जाने पर इन्हें निकाल लिया जाता है इस रोटी को ''पापेर पिठा'' कहा जाता है।

कुड़ा बड़ा की रस्म में पापेर पिठा के फटने, हाण्डी, तेलन तथा बांस के बर्तन के टुटने को अशुभ संकेत माना जाता है। इस अनिष्ठ से बचने के लिए समाज के लोगों के द्वारा पूर्व में ही पूरखा देव व ग्राम देवी-देवता के समक्ष मंगल कामना कर पाठ-पूजेई की जाती है।

माडो -

पापेर पिठा, फूला (मुर्रा), मंद, हल्दी, चांवल का आटा लेकर कुटुम सगा (समाज का एक सदस्य) जंगल से महुआ वृक्ष की डाल लाने जाता है। महुआ की डाल काटने के पूर्व वह उक्त सामग्रियों को महुआ के पेड़ पर अर्पित कर वृक्ष से डाल काटने की अनुमति लेता है और इसकी टहनिया काटकर लाता है। काटी गई टहनियों का एक भाग वह ग्राम के चौराहे पर छोड़ आता है तथा एक भाग घर लेकर आता है। घर पर पुजारी के द्वारा महुआ वृक्ष की डाल को एक गड्डे में गड़ाने की प्रक्रिया की जाती है जिसमें एक गड्डे में पुजारी द्वारा मुंग, चांवल, जबल, लुहागु, अरवां चांवल के 7-7 दाने गड्डे में डालकर महुआ डाल को उर्द्धवाधर गड़ाया जाता है। इसे ''मोड़ो जोग'' कहा जाता है। महुआ की डाल में 7 गांठ हल्दी व 3 नग आम के पत्ते से उसे मुकुट स्वरुप पहनाया जाता है। इस स्थान पर लगभग 1-2 फीट का मिट्टी का चबुतरा बनाया जाता है और आसपास गोबर से लिपाई की जाती है। इस प्रकार मांडो तैयार किया जाता है, जिस पर पुजारी हल्दी-दूध छिड़कर पवित्र करता है।

बने हुए पापेर पिठा को बांस के ''परला'' (पर्रा) में दूध, दही, घी, दिया, चांवल, फूलालिया (चांवल का मूर्रा), धूप, अगरबत्ती, हल्दी, तेल, सरई पत्ता की चोकनी (दोना), महुआ का मंद के साथ रखकर एक ''सांपी पिला'' (श्वेत कपड़े) से ढककर रखा जाता है। जिसे घर की वरिष्ठ महिला या कन्या की माता सिर पर रखकर बाजे-गाजे के साथ सर्वप्रथम पुजारी के घर और फिर माटीगुड़ी में पूजा-पाठ के लिए जाते है। जहां माटी पुजारी तेल हल्दी को माटीगुड़ी में चढ़ाता है और अष्टवर्ग के अनुरुप वहां तेल हल्दी छोड़ देते है।

इस दिन कन्याएं उपवास रहती है। कन्याएं स्नान कर श्वेत साड़ी व श्वेत ओड़नी ओड़ती है। माटी गुड़ी में ले जाया जाता है जहां ये चांवल छिंटकर वापस घर आ जाती है। घर पर माई कुरिया में कन्या की बुआ कन्या को गोद में लेकर बैठती है, समधियान महिलाएं एक थाली में माटी गुड़ी से लाए गये हल्दी को घर में रखी हल्दी में तेल मिलाकर उसे आम पत्ते में लेकर गोत्र देव की संख्या के अनुसार कन्या को पैर से सिर की दिशा में तेल हल्दी चढ़ाती है।

इसी समय मडवा में कलश स्थापना की जाती है। कलश स्थापना में एक मिट्टी की छोटी हाण्डी में धान भरकर उसके उपर 7 आम की पत्ती रखी जाती है और एक चोखनी में चांवल भरकर उसके उपर दीपक जलाया जाता है।

तेल चढाना -

माई कुरिया में मोहलाईन (कन्या की बुआ) उसके हाथ की अंजरी के नीचे अपना हाथ रखकर खड़ी रहती है इसकी अंजरी में झाखर चांवल डालता है। एक श्वेत कपड़े के पर्दे की आड़ में कन्या अंजरी में चांवल लेकर मोहलाईन के आगे-आगे मडवा में जाती है। मोहलाईन अपने साथ पर्रा में माटी देव के स्थान से लाए गये सामग्री को लिये हुए होती है। इस स्थिति में मडवा के 07 फेरे घड़ी की घूर्णन दिशा के विपरित (Anti clockwise) लिये जाते है। इस समय स्वजातीय महिलाएं तथा ''लगनिया'' द्वारा मंगल गीत गाया जाता है।

केबोलई बुढ़ा देबो

केबोलई बुढ़ी देबो......

केबोलई दुल्हा देबो

केबोलई दुल्ही माई........

गाईले मंगल गीत, हुलो हुली......

अर्थात् कोई कह रहा है बुढ़ा देव, कोई बोल रहा है बुढ़ी दाई, गा

यह मंगल गीत एक प्रकार से सभी देवों को मंगल कार्य में आमंत्रित किये जाने गाया जाता है।

भांवर (फेरे) होने के बाद मडवा में कलश के समक्ष कन्या बुआ की गोद में बैठती है। सर्वप्रथम पुजारी द्वारा आम पत्ते में हल्दी लेकर मडवा, कलश को अर्पित किया जाता है और इसके बाद कन्या को तेल-हल्दी पैर से सिर की ओर गोत्र देव की संख्या के आधार पर लगाया जाता है। जिसे तेल चढ़ाना कहा जाता है। इसके बाद कन्या के माता-पिता और फिर सामाजिक जन तेल-हल्दी कन्या को लगाते है। कन्या को कक्ष में तथा मण्डप में तेल-हल्दी लगाने की प्रक्रिया 3 बार दुहराई जाती है।

डालपेन -

हल्दी की रस्म हो जाने के बाद स्वजातीय सदस्य कन्या को पेठगुना (पिठ्ठ अर्थात पीठ पर) लेकर ग्राम के चौराहे जहां महुआ की डाल छोड़ी गई थी वहा एक सफेद चादर की पर्दे में लेकर जाता है। एक परला में कन्या की बुआ दूध, दही, घी, दिया, चांवल, फूलालिया (चांवल का मूर्रा), धूप, अगरबत्ती, हल्दी, तेल, मूंग तिल, सरई पत्ता की चोकनी (दोना), महुआ का मंद के साथ मुर्गी का एक अण्डा, टाड़ी, कोड़ी (मिट्टी की छोटी और एक बड़ी हाण्डी या पोरा) तथा साथ में एक सब्बल को सफेद कपड़ा बांधकर लेकर जाती है।

महुआ डाली रखे स्थान पर सभी सामग्री रख दी जाती है, और गरिया के पानी को दोनों हाण्डी (टाड़ी और कोड़ी) में मूंग, तिल के साथ डाल देते है। इसके बाद उक्त स्थान पर मंद की तरपनी दी जाती है।

साथ में गयी कन्या की ''मानता''मामी, बुआ, बड़ी मां, चाची, मौसी को नए कपड़े या साड़ी दी जाती है। इस स्थान पर धूप-बत्ती देकर बुढ़ा देव को आमंत्रण दिया जाता है। इसी स्थान पर समधियान पुरुष के द्वारा साबर से मिट्टी खोदकर मानता की महिलाओं के आंचल में दिया जाता है, जिसे महिलाएं रखती है। इसके बाद टाड़ी को पांच समाज के लोग उठाकर कन्या की बड़ी मां, चाची या मौसी के सिर पर रखते है तथा कोड़ी को कन्या की बुआ के सिर पर रखते है। राजगोंड जनजाति में ऐसी मान्यता है कि, इस समय टाड़ी और कोड़ी में पूर्वज आकर विराजमान हो जाते है और इसके प्रभाव से उसे सिर पर धारण करने वाली महिला उक्त पूर्वज के व्यवहार की भांति ही व्यवहार करती है। उक्त पूर्वज द्वारा मांगी जाने वाली वस्तु उन्हें दी जाती है। टाड़ी और कोड़ी को बाजे-गाजे के साथ घर लाया जाता है। मडवा में इनका स्वागत किया जाता है तथा मडवा के सामने एक पीढ़ा के उपर इन्हें रख पूजा अर्चना की जाती है।

कन्या को पीढ़ा के सामने खड़े रखकर पीढ़ा के उपर चार कोनो एवं मध्य में चांवल और उसके बीच में एक-एक हल्दी रखी जाती है। इस रखी हल्दी को 5-7 विषमगोत्री सदस्य नांगर फाल (हल का लोहे का भाग) में कपड़ा बांधकर तोड़ते है और इसमें कुछ मात्रा में चिंवडा व घी मिलाकर कन्या को खिलाते है। जिसे ''गुहा चिहरा'' कहा जाता है। इसके बाद टाड़ी के उपर कोड़ी को रखते हुए उन्हें परस्पर बांध कर मडवा के महुआ डाल में लटका दिया जाता है। कन्या को कक्ष में ले जाया जाता है जहां एक दोना में हल्दी, चांवल और कोयले को पीसकर पानी में मिला कर मोटा घोल बनाया जाता है। इस घोल में

''जड़ा पत्तर'' अण्डी के पौधे की पत्ती के डंठल की सहायता से कन्या की ''मुठा'' हथेली, कोहनी, बांह, गाल, माथा, पादगोड़, पेंडरी (पिंडली) में स्टार आकृति की छाप बनाई जाती है। जिसे बना कहा जाता है। यह एक प्रकार का गोदना या श्रृंगार के रुप में शरीर के अंगों में अंकित किया जाता है। बना बनाने में केवल अण्डी के पत्ते का उपयोग किया जाता है क्योंकि इसके पत्ते की छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

परना -

7 महिला और पुरुष समधियान मिट्टी के हाण्डी में रोका पीठा, थोड़ी भात, मूंग की दाल और चिवड़ा भीगोकर लाते है। इन सामग्री को आंगन मे रखा जाता है। आंगन में 7 पत्तल के दोने को गोलाकृति में रखते है और एक-एक दोना के अन्तराल में पृथक-पृथक सामग्री को डालते है। इसके बाद दोनो से एक-एक निवाला समधियान द्वारा कन्या को खिलाकर दोने को परस्पर एक दूसरे से बदल देते है। यह प्रक्रिया प्रत्येक दोना में दुहराई जाती है। इसे परना चुआ (घूमाना) कहा जाता है। दोना के खाली हो जाने पर कन्या उस दोने में हाथ धो लेती है। इसके बाद हाण्डी में शेष बचे खाद्य सामग्री को सभी सदस्य आपस में बाटकर खाते है।

तेल उतारना

तेल उतारने की प्रक्रिया तेल चढ़ाने की प्रक्रिया से थोड़ी पृथक होती है। कन्या को कक्ष से हाथों की अंजली में चांवल रखकर एक सफेद कपड़े के पर्दे के पीछे लाया जाता है जिसमें बुआ उसके पीछे-पीछे चलती है। मडवा में कलश के समक्ष कन्या बुआ की गोद में बैठती है। सर्वप्रथम पुजारी द्वारा आम पत्ते में हल्दी लेकर मडवा, कलश को अर्पित किया जाता है और इसके बाद कन्या को तेल-हल्दी सिर से पैर की ओर गोत्र देव की संख्या के आधार पर लगाया जाता है। इसके बाद कन्या के माता-पिता और फिर सामाजिक जन इसी प्रकार सिर से पैर की ओर तेल-हल्दी कन्या को लगाते है। जिसे तेल उतारना कहा जाता है। यह प्रक्रिया भी 3 बार दुहराई जाती है।

कखार बोरी

इसी स्थान पर पुजारी मडवा में पुजारी द्वारा बकरे की पुजेई दी जाती थी। वर्तमान में आर्थिक स्थिति के अनुसार बकरे की पुजेई दी जाती है, परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर होने पर भीगी उड़द की दाल में झार खोखार (रखिया) को महीन काटकर मिलाया जाता है। इसकी लोई बनाकर सुखा दी जाती है। लोई सुख जाने पर इसमें सिकुन (बांस की महीन पत्ती) लगाकर बकरे की आकृति बनाई जाती है। पुजारी प्रतीकात्मक रुप से इस आकृति की बलि देता है। जिसे कखार बोरी कहा जाता है।

कखार बोरी के बाद पीढ़ा के चारों कोनों एवं मध्य में गोबर से दीया जलाया जाता है। इसके पीछे कन्या को खड़े कराकर परला को उल्टा उसके उपर ढका जाता है, इसके बाद बैगा या झाखर के द्वारा टाड़ी और कोड़ी के पानी को उसके सिर पर गिराया जाता है। टाड़ी के पानी को जब कन्या के उपर गिराया जाता है तब अन्य विवाहित सदस्यों द्वारा उस पानी को अपना पेन मानते हुए हाथों से लिया जाता है इसे ''कुंवारी अमेरा पेन'' कहा जाता है।

अमेरा पेन के बाद 3 या 5 महिलाओं द्वारा परली में कन्या को बैठाकर झुलाया जाता है। जिसे ''दुरला नचाना'' कहा जाता है। टाड़ी और कोड़ी से पानी डालने वाले सदस्य तथा दुरला नचाने वाली महिलाओं को परिवार द्वारा कुछ भेंट स्वरुप प्रदान किया जाता है।

उक्त प्रक्रिया के बाद टाड़ी और कोड़ी में बचे अनाज या अन्य सामग्री, मौहा डाली को विसर्जन करने तथा कन्या को स्नान कराने लेकर जाया जाता है। साबर से जिस मिट्टी की खुदाई की जाती है उसी मिट्टी से कन्या अपने केश धोती है और स्नान कर घर वापस आती है। इस प्रकार कुड़ा बड़ा की रस्म पूर्ण की जाती है। राजगोंड जनजाति में कन्या के कुड़ा बड़ा संस्कार नही होने को अशुभ माना जाता है तथा सामाजिक रुप से कुड़ा बड़ा नही करने वाले परिवार के लिये दण्ड का प्रावधान है।

घर घोलाव -

राजगोंड जनजाति में कन्या या स्त्री के मासिक स्त्राव होने पर उसे 07 दिवस तक अशुद्ध माना जाता है, इस अवधि में इन्हें रसोई घर में प्रवेश, भोजन बनाना, पानी लाना, देवी-देवता के स्थान पर जाना एवं धार्मिक-सांस्कृतिक कार्यक्रम में सम्मिलित होना तथा शारीरिक संबंध बनाना निषेध होता है। आठवें दिन ही वह स्नान के बाद घर के कार्य करती है। जिसे घरगला कहा जाता है।

इनमें कन्या के प्रथम मासिकधर्म प्रारंभ होने माता के द्वारा उसे मासिकधर्म की जानकारी दी जाती है और समझाया जाता है कि यह महिलाओं में प्राकृतिक नियम है। इनमें कन्या के प्रथम रजस्वला होने पर उसे ''जवानहला'' अर्थात् वयस्क होना माना जाता है। मासिकधर्म की अवधि (07 दिवस) तक कन्या को एक पृथक कमरे में रखा जाता है। रजस्वला कन्या को प्रथम भोजन कमरे में पृथक से चोखनी (मिट्टी के बर्तन) में दिया जाता है तथा कन्या इन दिवसों में भूमि पर ही सोती है। सात दिवस तक कन्या को घर का सामान्य भोजन उसे उसके पृथक कमरे में ही दिया जाता है। सातवें दिन की रात्रि में सियानिन (बुजुर्ग महिला) व अन्य महिलाओं को कन्या को बाहर निकालने के लिए आमंत्रण दिया जाता है, जिसमें कन्या की बुआ/मामा(जिसके विवाह योग्य घर लकड़ा हो) के घर विशेष रुप से सूचना दी जाती है। कन्या की बुआ कन्या के लिए नया कपड़ा, एक पोई (मुर्गी का बच्चा) लेकर आती है।



मासिकधर्म के आठवें दिन ''कुकरा डाखे'' (प्रातः 03-04 बजे) जब कोई जगा न हो जिसे लुगा कछेन कहा जाता है इस समय

महिलाएं कन्या को जिस चोखनी में वह भोजन करती है तथा एक हाण्डी में गर्म पानी और हल्दी लेकर नदी या तालाब में जाती है। कन्या को हल्दी पानी के साथ स्नान कराया जाता है तथा कन्या बुआ/मामा के घर से लाये कपड़े को उस दिन धारण करती है। कन्या द्वारा जिस कपड़े को 7 दिवस तक पहने रहती है उसे वहीं फेंक देती है और हाण्डी व चोखनी को पटक देती है। कन्या मुर्गी के चुजे, अण्डा, रोटी, मुर्रा को घर आने वाले मार्ग के दो राहे या चौराहे पर छोड़ देती है और बिना पीछे मुड़े घर वापस आ जाती है। इसे ''घर घोलाव'' कहा जाता है।

इस दिन यदि बुआ तथा परिवार के सदस्यों की सहमति हो तो बुआ के द्वारा कन्या को ''हमर मानेक धान'' अर्थात् अब ये मेरे घर की हुई कहते हुए कुछ भेंट दे दी जाती है और समाज के कुछ लोगों या महिला सदस्यों को भोजन कराती है। जिसे ''मनता'' कहा जाता है।

राजगोंड जनजाति में कन्या के प्रथम माहवारी की सूचना की समय, तिथि व स्थान की जानकारी ''खरकार'' को दी जाती है। खरकार का पद वंशानुगत होता है। जो परिवार के पुत्र के जन्म की तिथि एवं कन्या के माहवारी की तिथि को एक परम्परागत पांजी में लिखित रुप में संधारित करता है। इस संधारित जानकारी का उपयोग लड़के-लड़की के विवाह के समय धर्म मिलान के रुप में किया जाता है।



विवाह

प्रत्येक समाज चाहे वह आदिम समाज हो या आधूनिक समाज हो। उनमें विवाह उस समाज की संस्कृति का एक आवश्यक अंग होता है क्योंकि यह वह सामाजिक व्यवस्था है जिसके आधार पर सामाज की प्रारंभिक ईकाई ''परिवार का निर्माण'' होता है। समाज द्वारा मान्यता प्राप्त विधि से परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने, इसे एक निश्चित ढंग से नियंत्रित करने तथा स्थिर रखने तथा स्थायी रुप देने के लिए विवाह नामक संस्था (Institution) का जन्म हुआ।

बोगार्डस् के अनुसार ''विवाह स्त्री और पुरुष को पारिवारिक जीवन में प्रवेश कराने की एक संस्था है''। वेस्टरमार्क के अनुसार ''विवाह वह संबंध है जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और जिसमें उत्पन्न हुए संभावित बच्चों के बीच एक दूसरे के प्रति होने वाले अधिकारों एवं कर्तव्यों का समावेश होता है।''

एस.सी. दुबे की कृति मानव और संस्कृति (1993) के अनुसार परिवार निर्माण के लिए दो आवश्यक सदस्य पति-पत्नि होते है। यौन-संबंधों को स्थिर करने और परिवार को स्थायी रुप देने के लिए विवाह की संस्था का जन्म हुआ है। विवाह द्वारा आर्थिक सहकार, सामाजिक दायित्व और आत्मीय भावनात्मक संबंध की श्रृंखला भी जुड़ने लगती है।

राजगोंड जनजाति में विवाह के चरण निम्नांकित होते है -

1. विवाह प्रकार

विवाह संबंध के आधार पर परिवारों के को दो रुप में विभक्त किया जा सकता है। अतः इनके अनुसार विवाह के दो मुख्य प्रकार है -

।) एक-विवाह (**Monoamy**)

डॉ. रविन्द्र नाथ मुखर्जी की कृति सामाजिक मानवशास्त्र की रुपरेखा (2007) में लेख अनुसार श्री मैलिनोवस्की ने अपनी पुस्तक Sex and Repression in Savage society में स्पष्ट लिखा है कि परिवार ही एक ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु-अवस्था से अपने साथ लाया है और वह परिवार एक-विवाही परिवार ही है तथा ''एक विवाही विवाह ही विवाह का एकमात्र सत्य रुप है, रहा है और रहेगा।''

''यदि एक पुरुष एक ही स्त्री से विवाह करता है तो ऐसे विवाह से उत्पन्न परिवार को एक-विवाही परिवार कहते है।'' विवाह के रुप में जनजाति और गैर जनजाति समुदायों में एक-विवाही प्रकार ही सर्वमान्य है।

2) बहु-विवाह (**Polygamy**)

जब एक स्त्री या पुरुष एक से अधिक पुरुष या स्त्री से विवाह संबंध स्थापित करते है तो ऐसे विवाह से उत्पन्न परिवार को बहु-विवाही परिवार कहा जाता है। इस प्रकार के विवाह को दो रुपों में विभक्त किया गया है -

(अ) बहुपति-विवाह (**Polyandry**) - इस प्रकार के विवाह में एक स्त्री एक समय में एक से अधिक पुरुषों से विवाह करती है। इस प्रकार उसके एक से अधिक पति एक समय पर होते है। कुछ समाजों में ये पति भाई ही हुआ करते है। इस प्रकार कई भाई मिलकर एक स्त्री से विवाह करते है। जिसे भ्रातृबहुपति विवाह कहा जाता है। उसी प्रकार अभ्रातृबहुपतिक विवाह में पति के भ्राताओं के अतिरिक्त अन्य लोग भी स्त्री के पति हो सकते है।

(ब) बहुपत्नी विवाह (**Polygyny**) - जब एक पुरुष एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करता है तो इसे बहुपत्नी विवाह कहा जाता है। इस प्रकार के विवाह का मूल आधार पत्नी की मृत्यु अथवा पत्नी से संतान की प्राप्ति न हो पाना है। इस स्थिति में पुरुष का अपनी युवा सालियों (पत्नी की बहनों) को विवाह हेतु प्राथमिकता दी जाती है। जनजातीय समुदायों में इस प्रकार के विवाह सामाजिक मान्यता प्राप्त भी होते है।

1. मान्यता प्राप्त विवाह संबंध

राजगोंड जनजाति में सामाजिक अधिमान्य विवाह निम्न है -

(अ) ममेरा-फूफेरा विवाह (**Cross-Cousin Marriage**)

राजगोंड जनजाति में ममेरा-फुफेरा विवाह की प्रथा प्रचलित है। इस प्रकार के विवाह में विवाह हेतु प्राथमिकता बहन या भाई के बच्चों को दी जाती है। जिसे क्षेत्रीय भाषा में ''बंदगोसिया'' कहा जाता है। इसमें कन्या का विवाह उसकी माता के भाई (मामा) के लड़के से की जाती है। इस तरह जब ''अ'' परिवार की लड़की जब दूसरे परिवार ''ब'' में जाती है तो पुनः ''ब'' परिवार की लड़की को ''अ'' परिवार में विवाह कर वापस लाया जाता है। जिसे ''मानेक धान'' अर्थात एक काठा धान वापस करना कहा जाता है। राजगोंड जनजाति में इस प्रकार का विवाह संबंध प्रचलित है, किन्तु उक्त प्रकार के विवाह की बाध्यता वर्तमान में नही है।

(ब) सेवा विवाह (**Marriage by Service**)

जनजातीय समाजों में वधूमूल्य (Bride price) प्रथा प्रचलित रही है। किन्तु कालांतर में कुछ समाजों में विवाह हेतु वधूमूल्य का स्वरुप बढ़ता गया जिसे पूरा कर पाना संभव नही रह गया था। जिसके कारण वर, वधू की प्राप्ति के लिए कन्या के पिता के घर में रहकर उसके आर्थिक कार्यों को पूर्ण करने तथा प्राप्त पारिश्रमिक के द्वारा वधूमूल्य चुकाने का प्रयास करते थे। इसके लिए वर कन्या के पिता के घर तब तक रहता तथा वहां अपनी सेवाएं देता था जब तक वधूमूल्य पूरा न हो जाये तथा कन्या का पिता पूर्ण रुप संतुष्ट न हो जाये। कभी-कभी युवक का कन्या से विवाह हो जाने बाद भी अनिश्चित समय तक कन्या के पिता के घर में ही रह जाता जिसे जमाई या घर जमाई भी कहा जाता है। इस प्रकार युवक का विवाह पश्चात अपने ससुर के घर में रहना लमसेना विवाह कहलाता है।

राजगोंड जनजाति में वर्तमान में भी लमसेना विवाह प्रचलित है। किन्तु लमसेना का उद्देश्य सेवा न होकर कन्या के पिता की आर्थिक कार्यों में सहयोग करना है। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब कन्या एक मात्र संतान हो तथा उसके परिवार में पिता की सम्पत्ति को धारित करने वाला कोई सदस्य शेष न हो या वर का परिवार न हो। अतः कन्या के परिवार के देख-रेख के उ`श्य से वर लमसेना जाता है और अपने जीवनकाल तक वहां का निवासी हो जाता है।

(स) परिवीक्षा विवाह (**Probationaty Marrige**)

इसमें होने वाले वर-वधू को एक दूसरे को समझने के उद्देश्य से विवाह पूर्व एक साथ रहने की अनुमति दी जाती है। जिससे वे एक दूसरे को निकटता से समझ सके और परिवीक्षा काल में रहने के बाद भी यदि उनके स्वभाव एक दूसरे से मेल नही खाते तो उन्हें पृथक् होने या विवाह न करने की स्वतंत्रता होती है।

राजगोंड जनजाति में भी वर-वधू एक दूसरे के परिवार में जाकर कुछ दिनों तक रहना अनिवार्य होता है। पूर्व में वर कुछ दिनों के लिए कन्या के घर रहकर वहां के कार्य करता था। वर का कन्या के घर में रहने की समयावधि कुछ दिनों से लेकर महिनों की भी हो जाती थी। वर के कार्यकुशल होने पर ही हल्दी रंग लगाकर उसे वापस भेजा जाता था। जिसे ज्वादेखा कहा जाता है। उसी प्रकार कन्या भी वर के घर कुछ दिनों के लिए जाती थी। वर के घर में उसकी गृहस्थ कार्यो में परिपूर्णता व कार्यकुशला को परिवार के लोगों द्वारा अवलोकन किया जाता था। कन्या के कार्यकुशल होने पर उसे भी हल्दी रंग लगाकर वापस उसके पिता के घर छोड़ दिया जाता था। जिसे बुआसेन कहा जाता है। वर या कन्या के कार्यकुशल या कोई कमी नजर आने पर इनका विवाह नही किया जाता था।

राजगोंड जनजाति में वर्तमान में भी ज्वादेखा अनिवार्य है किन्तु अब वर तथा कन्या अपने भावी ससुराल में सांकेतिक रुप से एक-दो दिन के लिए ही जाकर रहते है तथा वहां सुझाये गये कार्य करते है।

(द) पैठू विवाह / हठ विवाह (**Marrige by Intrusion**)

इस प्रकार के विवाह में एक कन्या अपनी इच्छा या पसंद के युवक के घर बल पूर्वक चली जाती है और तब तक उस घर में रहती है जब तक की युवक या उसके माता-पिता उसे वधू के रुप में स्वीकार नही कर लेते है। राजगोंड जनजाति में इस प्रकार के विवाह बहुत ही कम प्रचलित है क्योंकि कन्या के द्वारा युवक पसंद होने पर परिवार द्वारा आपसी तालमेल से ही सामाजिक नियमानुसार विवाह संबंधी निर्णय ले लिये जाते है।

(य) चुड़ी विवाह (**widow marriage**)

चुड़ी विवाह का प्रचलन मूल रुप से विधवा विवाह से अभिप्रेरित है। राजगोंड जनजाति में पुर्नविवाह या विधवा विवाह सामाजिक रुप से अधिमान्य है। किन्तु एक विधवा कन्या का पुनः हल्दी की रस्म करना निषेध है। इनके अनुसार कन्या को केवल एक बार ही हल्दी चढ़ सकती है। इस कारण से विधवा या परित्यक्ता का पुर्न विवाह चुड़ी विवाह कहलाता है। इसमें वर कन्या को सामाजिक रुप से चुड़ी पहनाकर उसे पत्नी के रुप में स्वीकार करता है। इस प्रकार के विवाह में अधिमान्य विवाह के समान विभिन्न रस्में नही की जाती है।

(र) उड़लिया विवाह या सहपलायन विवाह (**Marrige by Elopement**)

समाज में विवाह प्रायः बड़े-बुजुर्गो की सहमति तथा सामाजिक नियमों के अनुरुप ही किये जाते है। जिसमें बर्हिगोत्रीय तथा अंतःविवाही अर्थात स्वजातीय समुह में ही विवाह अनिवार्य है। किन्तु इसके विपरित विवाह के प्रतिबंधों के बीच युगलों में परस्तपर प्रेम या प्रणय के कारण वे सामाजिक प्रतिबंधों की अवहेलना कर सहमति से विवाह कर लेते है। ऐसी स्थिति में युगल प्रायः अपने ही गोत्र में अथवा दिगर समाज की कन्या अथवा युवक से घर से दूर भागकर विवाह कर लेते है। इस प्रकार के विवाह को उड़लिनया या सहपलायन विवाह कहा जाता है। किन्तु स्वजातीय उड़लिया या सहपालयक विवाह ही इनमे सामाजिक रुप से मान्यता प्राप्त है।

2. विवाह उम्र

राजगोंड जनजाति में कन्या के मासिकधर्म प्रारंभ होने तथा लड़के के शारीरिक रुप से -पुष्ट होने तथा उसकी दाढ़ी मूंछ आने पर उन्हे विवाह योग्य होना माना जाता है।

3. विवाह का स्वरुप

राजगोंड जनजाति में विवाह दो प्रकार से किया जाता है। जिसमें एक है बिहाव एवं दूसरा है बंदना। बिहाव में कन्या पक्ष वर पक्ष के घर अपने सगे संबंधियों के साथ जाते है। उन्हें एक पृथक आवास दिया जाता है इस अस्थायी घर से ही कन्या पक्ष के विवाह संबंधी पूरी रस्में पूर्ण की जाती है। जिसमें विवाह का पूरा खर्च वर पक्ष द्वारा वहन किया जाता है। बंदना विवाह में वर पक्ष कन्या पक्ष के यहां बारात लेकर जाता है। इस प्रकार का विवाह वर्तमान में प्रचलन में है।

4. विवाह हेतु पहल एवं प्रक्रिया

राजगोंड जनजाति के बालक-बालिका के विवाह योग्य हो जाने पर वर पक्ष द्वारा समाज में विवाह योग्य कन्या की पूछ-परख की जाती है। विवाह विषम गोत्र में ही सम्पन्न किया जाता है। यदि नेताम गोत्र के सदस्य को विवाह योग्य कन्या देखने जाना है तो उसे एक विषम गोत्रीय सगा को साथ लेकर जाना अनिवार्य है जिसे कुटुम कहा जाता है। कुटुम कन्या के ग्राम का तथा वर के समधियान गोत्र के ही बनाया जाता है।

विवाह योग्य कन्या की जानकारी मिलने पर वर पक्ष कुटुम के साथ कन्या के घर जाता है और कहता है ''फूल तुम्हारे यहां खिला है उसकी खुशबू से हम आये है'' । कन्या पक्ष को लड़का पसंद आ जाने के बाद भी एक ही बार में विवाह हेतु हामी नही भरी जाती है। इनमें कम से कम 1 बार और लड़के पक्ष को घर आने कहा जाता है। इससे लड़के को परखा जाता है।

रिश्ता ठीक लगने पर ही खरकार को लड़का-लड़की का करम पंजी (लड़के का जन्म पंजी एवं लड़की की मासिक धर्म की तिथि पंजी) को मिलान के लिए दिया जाता है। नाग-नाड़ी मिल जाने के बाद लड़के को ज्वादेखा के लिए बुलाया जाता है।

ज्वादेखा -

रिश्ता पक्का हो जाने के बाद वर अपने महला (बहन के पति) के साथ कन्या पक्ष के घर जाता है जहां कन्या की बहनों के द्वारा वर एवं उसके साथ गये महला को होली के समान रंग व हल्दी लगाते है। जो उनके द्वारा भाटो चिन्हा दिया कहा जाता है। और वे इसी रुप में अपने ग्राम वापस आ जाते है। इन्हे देखकर ग्राम में सभी समझ जाते है कि वर ज्वादेखा के लिए गया था। पूर्व में वर कुछ दिनों के लिए कन्या के घर रहकर वहां के कार्य करता था। वर के कार्यकुशल होने पर ही हल्दी रंग लगाकर उसे वापस भेजा जाता था। वर का कन्या के घर में रहने की समयावधि कुछ दिनों से लेकर महिनों की भी हो जाती थी। इसके बाद ही वर पक्ष मोन तरपनी के लिए कन्या पक्ष में जाते थे।

मोन तरपानी / मंद तरपैन -

एक शुभ दिन देखकर वर पक्ष लिया-पीठा, अरसा पीठा, बीड़ी, नारियल और मंद लेकर कन्या पक्ष के घर जाते है। माटी के लिए धंगरा माझी (माझी गोत्र का सदस्य) को आमंत्रण भेजा जाता है। यही मंद तरपनी का कार्य करता है। धंगरा माझी के आ जाने के बाद कन्या के घर में वर द्वारा लाये गये सामग्री को सबके सामने रखा जाता है जिस पर कन्या पक्ष से पूछा जाता है कि ये कौन से नेंग का है। जिस पर कुटुम द्वारा जानकारी दी जाती है कि मंगनी / फलदान के लिए मंद तरपनी या मंद तरपैन या मोन तरपानी की नेंग की सामग्री लाये है। इस सामग्री को दो भाग : एक भाग घर विधि के लिए तथा दूसरा भाग सामाजिक लोगों के लिए बांट लिया जाता है। धंगरा माझी के द्वारा घर भाग की सामग्री को माटी देव में अर्पित कर मंद की तरपनी दी जाती है। दूसरे भाग को सभी सगा आपस में बांट कर ग्रहण करते है। इसके बाद दोनों समधियानों के द्वारा फलदान / सगाई तथा विवाह की तिथि तय कर ली जाती है।

बुआसेन -

मोर तरपनी हो जाने बाद कन्या को लाने के लिए वर पक्ष की कुछ महिलाएं जाती है। कन्या कुछ दिन वर के घर पर ही रहती है। जहां कन्या के द्वारा वर के घर घरेलू काम किया जाता है। कन्या के व्यवहार कुशल होने पर ही माली फिंदन की रस्म होती है। वर्तमान में कन्या 1 या 2 दिन ही वर के घर पर रहती है।

कन्या जब वर के घर पर रहती है तब वर के घर में गोरोबुडेन (गृहशांति) की जाती है। इसमें बुढ़ादेव एवं ग्राम के सभी देव से विवाह कार्य सुगमता हो जाने के लिए तालाब किनारे महुआ वृक्ष के नीचे ग्रहशांति हवन किया जाता है जिसमें साजा, आम, चैरजाम (जामून), सरगी, कराधवरा, कुकुरदप्ती, फुंडेर (फुडहर), फरसा (पलास) की लकड़ियों का उपयोग हवन की अग्नि में किया जाता है। हवन के बाद घुसरा (सुअर) की पुजेई एवं मंद की तरपनी दी जाती है। घुसरा की पुजेई न देने के स्थान पर सुहरा कांदा को प्रतीकात्मक रुप से पुजेई के दी जाती है। इसके बाद सभी यहां भोज करते है।

गोरोबुडेन के बाद कन्या को नए कपड़े दिये जाते है तथा 10-12 काठा मुर्रा, पीठा के साथ कन्या को उसके पिता के घर छोड़ दिया जाता है। कन्या के अपने घर वापस आ जाने के बाद स्वजातीय सदस्य कन्या का विवाह तय हो जाना मानकर उसे अपने-अपने घर भोजन के लिए बुलाते है तथा भोजन के बाद उसे कुछ राशि व कपड़े नये दाम्पत्य जीवन में प्रवेश के आशीष स्वरुप प्रदान करते है।

माली फिंदन -

मादी फिंदन में वर की बड़ी भाभी (वर के भाई की पत्नी) 02 नग सफेद साड़ी व ब्लाउज, 5-7 नग लाख की चुड़ी, पनिया (लकड़ी की कंघी), करिया माली, काजल, 2 टोपली (बांस की टुकनी) में लिया पीठा, 2 मैसारी (माताओं के लिए साड़ी) और अन्य श्रृंगार की सामग्री को रख वधू पक्ष के घर जाती है। साथ में पाटनरिया (समधियान सदस्य) 10 अड़ा (1 अड़ा = 1 किलोग्राम) चांवल, दाल हल्दी, मिर्च, फूलालिया और मंद साथ में लेकर जाता है। पूर्व में पाटनरिया (ग्राम में निवासरत यादव जाति का सदस्य) यह सामग्री कांवर में रख कर वर की भाभी के साथ जाता था।

कन्या पक्ष के घर पहुंचने के बाद कन्या पक्ष सगे संबंधियों को बुलाता है और लाये गये सामग्री को घर के बीच आंगन में रखा जाता है। यहां धंगरा माझी (माझी गोत्र का सदस्य) के द्वारा मोन तरपैन किया जाता है। इस दिन राजगोंड समाज के अष्टवर्ग के उपस्थित रहते है। मोन तरपैन के बाद वर की भाभी लाये गये सामग्री को कन्या पक्ष की महलईन (कन्या की बुआ) को दे-देती है तथा लाये गये सामग्री में से करिया माली तथा लाखचुरी को कन्या पहनाती है। भोजन करने के पश्चात वर की भाभी तथा महला वापस अपने घर आ जाते है।

कन्या छिड़ा / कथा पुछन

वर पक्ष के एक कोरली मुर्रा, पीठा, दस सरगी बीड़ी, पिका पत्ते का धुंगिया लेकर कन्या पक्ष के घर जाते है। संध्या में माटी मुखिया के द्वारा ग्राम में स्वजातीय सदस्यों को आमंत्रण देते है। जिसे कथा पुछन कहा जाता है।

सभी सदस्यों के आ जाने के बाद दोनों परिवार के मुखिया वर पक्ष के द्वारा लाये गये बीड़ी को जलाकर आपस में अदला-बदली करते है। इसके बाद सबके सामने एक कोरली मुर्रा एवं मंद को रखा जाता है जिस पर समधियान समूह पूछता है ये सामग्री किस नेंग के लिए है ? वर पक्ष द्वारा जवाब दिया जाता है कि, ''ब्याह जाग धरी चो'' अर्थात विवाह की तिथि निश्चित करने लाये है। जिसे जोग धरना कहते है।

इस समय वर पक्ष के द्वारा कन्या पक्ष को मांगेन भोजी के रुप में 12 काठा चांवल, 10 अड़ा (10 किलो) दाल और $7^{1/2}$ रुपये नगद राशि मांदी के अनुसार दिया जाता है।

विवाह की तिथि से 4-5 दिन पूर्व कन्या के घर पर मोडोजोग की रस्म की जाती है। मोडोजोग कन्या के कुड़ा बड़ा की भांति ही नेंग है।

जजमानी संबंध

जजमानी एक सामाजिक सह आर्थिक व्यवस्था है। जिसमें विभिन्न पेशों अथवा व्यवसायों में संलग्न विभिन्न जाति जनजाति समुदायों का परस्पर सह संबंध स्थापित होता है। भारतीय मानवशास्त्र के अनुसार आरंभ में जजमान शब्द का प्रयोग ब्राम्हण पुरोहितों द्वारा उन जाति के लोगों के लिए किया गया था जो खेती-बाड़ी, शासन तथा दस्तकारी जैसे कर्म में लगे हुये थे। ब्राम्हण धार्मिक कर्मकाण्डों का विशेषज्ञ होने के कारण गावों में घूम-घूमकर जजमान की सेवा किया करते थे। किन्तु कालांतर में जजमानी व्यवस्था का और विस्तार हुआ। इनमें पुरोहितों के सहयोगी नाई, कुम्हार, बढ़ई, लोहार, माली, पनेरी आदि की सेवा भी अनिवार्य थी। अतः इन्हें भी जजमानी व्यवस्था अन्तर्गत शामिल किया गया। जजमानी व्यवस्था में काम करने वाली इन जातियों को एक शब्द

''पवनिया'' नाम से भी पुकारा जाता है।

इसी प्रकार राजगोंड जनजाति में भी विवाह हेतु सगे संबंधियों एवं जजमानी प्रथा के तहत ग्राम के कुम्हार, कमार, माली एवं यादव जाति के सदस्यों को विवाह निमंत्रण भेजा जाता है। विवाह निमंत्रण में स्वजातीय सदस्यों के लिए चांवल एवं हल्दी मिलाकर लेकर परिवार के सदस्य जाते है और निमंत्रण देते हुए उन्हें हल्दी चांवल का टीका लगाया जाता है और यदि सदस्य घर पर न हो तो उनके घर की चौखट पर हल्दी चांवल छिड़क दिया जाता है। जिससे संबंधित को ज्ञान हो जाता है कि मेरे घर पर विवाह निमंत्रण आया है।

जजमानी प्रथा अन्तर्गत - संबंधित जातियों के घर चांवल, 1 रुपया, हल्दी की एक गांठ लेकर जाते है और उन्हें विवाह आमंत्रण दिया जाता है। जजमानी व्यवस्था अन्तर्गत आने वाले इन समुदायों द्वारा निम्नानुसार सामाजिक-आर्थिक संबंध स्थापित होते है -

a) कुम्हार जाति के द्वारा विवाह हेतु उपयोगी मिट्टी के 4 रुखा, 4 कुनला, 4 तेलेन, 10-12 बैटा (दीया), 20 टांडी व कौड़ी बना कर विवाह वाले परिवार को दिया जाता है।

b) कमार जाति के द्वारा विवाह में लगने वाले बांस बर्तन जैसे पर्रा, कोरली, सुपा, टैट (छोटी चटाई), भात रखने हेतु छेटना आदि की व्यवस्था की जाती है।

c) माली जाति के द्वारा विवाहोपयोगी सिंगमुकुट या मौर बनाया जाता है तथा इन्हें गुआ दिया जाता है।

d) यादव समुदाय द्वारा विवाह में पानी की व्यवस्था करने का कार्य किया जाता है। इस समुदाय को सामाजिक व्यवस्था में पाटनरिया कहा जाता है।

e) गांडा समुदाय द्वारा ग्राम मे सुअवसरों पर बाजा बजाने का कार्य किया जाता है इस हेतु इन्हें इनके सिंगबाजा एवं मोहरी के साथ आमंत्रित किया जाता है।

सभी संबंधियों को निमंत्रण देने के बाद से वर-वधू पक्ष विवाह की तैयारी में लग जाता है। तय की गई तिथि अनुसार दोनों पक्षो में विवाह कार्यक्रम प्रारंभ होता है। कार्यक्रम का पहला दिवस मोडो गडेन का होता है।

विवाह कार्यक्रम

मोडो गडेन या मोडो गंसन -

मोडो गडेन का अर्थ मडवा या मण्डप गड़ाना होता है। स्वजातीय सदस्यों के द्वारा घर के आंगन में लकड़ी के 9 खम्भे वर्गाकार रुप में गड़ाये जाते है जिसमें मध्य में एक खम्ब होता है। जिसमें बेट कुर्रा बांधी जाती है। इनके उपर बांस की पाटी लगाई जाती है। पाटी के उपर डुमेर डाल, खजुर के पत्ते से मण्डप को छाया या ढका जाता है। मण्डप बनने के बाद एक मांदी के लोगों को साथ बैठाकर उसी मांदी के कार्य कुशल दो लोगों को महला करिया बनाया जाता है। महला करिया के द्वारा ही विवाह के समस्त नेंग कार्य किया जाता है। उपस्थित सभी सदस्यों को भोज कराया जाता है।

अगले दिन सुबह महला करिया को बुलाया जाता है तथा कन्या पक्ष के द्वारा विवाह हेतु मंगाये गये सामग्री के साथ कन्या के घर भेजा जाता है। इन सामग्री में काठकरन, पत्ता खन्दा, मोडोगंसन के नेंग की सामग्री सम्मिलित रहती है। जो

निम्न है-

काठकरन	-	लकड़ी लाने के लिए
काठपत्ता	-	पत्ता लाने के लिए
खन्दा कोडेन	-	चुल्हा बनाने के लिए
मोडो गडेन	-	मडवा बनाने के लिए

राजगोंड जनजाति में सूकदाम की प्रथा अनिवार्य है जिसे ''मानी पिघानी'' कहा जाता है। मानी पिघानी के रुप में वर के पिता के द्वारा वधू के पिता को प्रत्येक नेंग के लिए $7^{1/2}$काठा चावल, $7^{1/2}$ रुपया आवश्यक होता है। भोजी के नेंग के रुप में 25 काठा चांवल, 5 काठा दाल, हल्दी, मिर्ची, नमक, तेल, 02 नग मायसाड़ी कन्या की माता एवं मौसी के लिए, पैल बुआसीन 01 नग कन्या के लिए तथा 2500 रुपये नगद मांदी के अनुसार दिया जाता है। क्षेत्र विशेष में उक्त के अतिरिक्त दो साड़ियां मायसारी के रुप में वधू की माता एवं मौसी के लिए भी दी जाती है।

कोटेन गंसन /घर गंसन

यह विवाह का पहला नेंग या रस्म है। इसमें वर अपने एक कांसे की थाली में तेल, हल्दी लेकर सर्वप्रथम अपने ईष्ट को लगाता है। देव को चढ़ी हल्दी को घर पर पीसी गई हल्दी में मिला दी जाती है। यही हल्दी वर को लगती है। इसके पश्चात् वर की भाभी वर को स्नान कराती है और वर को नयी सफेद धोती पहनाई जाती है। वर का मामा तथा बुआ उसे गोद में बिठाते है तथा उसे काला माली (काले मोतियों की माला) एवं चांदी का खोखला पहनाते है। परिवार का पुजारी 1 रुपये का सिक्का तथा एक रुई में 7-7 नग मूंग के दाने, हल्दी की गांठ, चांवल लपेटकर धोती के एक सिरे में बांधता है। जिसे हूम-धूप दिखाया जाता है। इसके बाद वर को बाबे की रस्सी से बंधी आम पत्ते से निर्मित मुकुट पहनाया जाता है तथा कंधे पर एक सफेद धोती रखी जाती है।

तत्पश्चात वर को खड़े कराकर उसके अंजरी में चांवल डालते हुए उसमें एक हल्दी की गांठ रखी जाती है। जिसे वर छः बार नीचे छोड़ देता है एवं सातवीं बार उसे पकड़कर घर के कोटेन गसंन के पास गोत्र देव संख्या के अनुसार परिक्रमा करता है, परिक्रमा के बाद अंजरी में रखे चांवल को नीचे छोड़ता है जिसे मामा या बुआ अपने हाथ में पकड़ते है। इसके बाद वर को मडवा के पास बैठाकर तेल-हल्दी चढ़ाई जाती है। यह प्रक्रिया दो दिवस तक 3-4 घण्टे के अंतराल मे दुहराई जाती है।

दूसरा दिन -

दूसरे दिन फूलकन्या की रस्म की जाती है। चांवल फूला (जिस चांवल, हल्दी को भीगाया गया होता है।) को पुजारी घर की महिलाओं को पीसने के लिए दे देता है। पीसे गये चांवल से पापेर पीठा बनाया जाता है तथा समाज के दो सदस्यों में एक को खाना बनाने के लिए **खोलासलिया /खंदागढ़िया** एवं दूसरे सदस्य को **भण्डार** (विवाह हेतु आवश्यक खाद्यन्न की जिम्मेदारी एवं देखरेख) हेतु **भण्डारगढ़िया** के रुप में नियुक्त किया जाता है।

भण्डारगढ़िया तथा खंदागढ़िया एक पुड़ा (बांस की टोकरी) में पापेर पीठा और भण्डार सामग्री लेकर कन्या के घर जाते है जहां कन्या पक्ष के पुजारी के द्वारा सामग्री का मिलान किया जाता है। इस समय पुजारी के द्वारा एक मुर्गा को चुल

(विवाह के भोजन बनाने हेतु निर्मित चुल्हा) के एक ओर से छोड़ता है और दूसरे ओर उसे पकड़ा जाता है। पुजारी सामग्री की पुजा कर कन्या पक्ष के भण्डार को शुरु करता है। भण्डारगढ़िया कन्या घर में संध्या समय तक रुकता है तथा कन्या घर के भण्डार में आवश्यकतानुसार सामग्री की पूर्ति करता है।

कन्या पक्ष में इस दिन वर पक्ष की भांति मोडो गंसन, डालपेन, परना चुआ और तेल उतारने की रस्में पूर्ण की जाती है। कन्या के घर उक्त रस्में हो जाने के बाद भण्डारगढ़िया वापस वर के घर आ जाता है।

तेल पिया -

वर पक्ष एवं वधू पक्ष में पृथक-पृथक वर-वधू को मंडप में बैठाकर उसके सिर के उपर कांड (तीर) को रखकर उसके एक सिरे से तिल के तेल की धार डालते है जिसे घर की पांच महिलाएं अपने हथेली में लेती है और हथेली में लिए तेल को थोड़ा-थोड़ा सांकेतिक रुप से वर / वधू को पिलाते है। इसे तेल पिया कहा जाता है। इसके बाद वर / वधू के लगिन के कपड़े को उनके गोद में रखकर परना चुआ की रस्म की जाती है।

बारात प्रस्थान

गांडा जाति के सदस्य अपने वाद्ययंत्र निशान बाजा, तुरही लेकर वर के घर पर आते है। मड़वा के समक्ष निशान बाजा को रखा जाता है जहां पुजारी मुर्गा की पुजेई देता है। पुजेई दिये गये मुर्गा को बाजा वालों को भेंट दे दिया जाता है। गाजे-बाजे के साथ बारात वधू के घर या ग्राम में जाती है। बारात वधू के घर पहुंच जाने के बाद बारात पहुंचने की सूचना वधू-पक्ष को दी जाती है।

समधी-भेंट -

वधू-पक्ष का महला करिया एक हाण्डी में पानी तथा कुछ सदस्य कुरुलु (खेत समतल करने लकड़ी का कोपर का भाग) लेकर बारात के स्वागत के लिए उनके निर्धारित स्थान पर जाते है। बारातियों को कुरुलु में बैठाकर हाण्डी के पानी से उनके पैर धोए जाते है तथा गुलाल का टीका लगाया जाता है। जिसे समधी भेंट करना कहा जाता है। वर तथा वधू पक्ष परस्पर समधी या समधियान कहलाते है। बारातियों में पुरुष सदस्य एवं महिला सदस्य अलग-अलग समधी भेंट करते है। पुरुष सदस्य परस्पर सामने पापेर पीठा एवं चोंगी (सरई पत्ते की लंबी बिड़ी) रखते है। समधी आमने सामने बैठकर लाये गये चोंगी को जलाते है और इसे एक दूसरे को पीने देते है। जिसे ज्वार भेंट कहा जाता है। वहीं महिलाएं परस्पर गोलाकार आकृति में अपने पैर जोड़कर बैठती है और उनके पैरों के जोड़ में सर्वप्रथम कांसे के लोटे से पानी डालती है और टीका लगाती है। इसके बाद ये बीड़ी जलाकर सांकेतिक रुप से अदला-बदली करती है और उसे एक दूसरे के कान में खोंचती (लगाती) है। उपस्थित सभी बारातियो को भोजन कराया जाता है।

समधी भेंट के बाद वधू की छोटी बहने वर को वहां से स्नान के लिए लेकर चली जाती है। स्नान करने वाले स्थान पर वर को दातुन-मुखारी के लिए केन्दु (तेन्दु) की एक डाल दातुन के रुप में दिया जाता है। वर को स्नान कराने के बाद उसे भोजन कराया जाता है। इसके बाद वधू की बहने उसे वर पक्ष के पास छोड़ने जाती है जहां उन्हें स्नान का नेंग के रुप में 1 रुपया ओर 1 दोना चांवल दिया जाता है। वर पक्ष को ठहरने के लिए एवं भण्डार (खाद्य सामग्री) रखने के लिए एक भण्डार कक्ष दिया जाता है। जहां एक दिया भी जलाया जाता है।

वर पक्ष कन्या के माई कुरिया में चांवल, तेल, हल्दी, मौर, धूप और 2 कुकरा (मुर्गा) लेकर जाते है। यहां लाए गये सामग्री को ईष्टदेव में अर्पित कर विवाह कार्य के सिद्धी की कामना की जाती है और माई पुरखा में कुकरा (मुर्गा)की पुजेई दी जाती है। इसके बाद वर एवं वधू की बड़ी भाभी 5 किलोग्राम चांवल, पीसी हल्दी, दाल, नमक, पापेर पीठा, एक कट्टा बीड़ी, चांवल का आटा, धूप एवं मंद एक कोरली (बांस की ढक्कन वाली टोकनी) में रखकर एक उसे एक सफेद कपड़े में ढककर सिर में बोहकर (रखकर) भण्डार कक्ष में जाती है। जहां समधियान एक दूसरे को हल्दी का टीका लगाकर स्वागत करते है तथा समधियान महिलाएं हल्दी को पानी में घोलकर उपस्थित पुरुषों के पैरों में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में लगाती है। इसके पश्चात दोनों पक्ष द्वारा कोरली में लाए सामग्री को परस्पर बदला जाता है अर्थात वधू पक्ष द्वारा लाये गये कोरली को वर की भाभी तथा वर-पक्ष द्वारा लाये गये कोरली को वधू की भाभी बोहती है। इस प्रकार समधी भेंट पूर्ण होता है।

लगीन

वर तथा वधू पक्ष के द्वारा लाए गये सामग्री को एक स्थान पर रखा जाता है जहां खरकार के द्वारा लगन की पूजा की जाती है। पूजा के बाद महला वधू के श्रृंगार की सामग्री, चांवल, दाल, 7$^{1/2}$ रुपया मौर-मुकुट वधू पक्ष की माहलिन को दे देता है। माहलिन सामग्री लेकर वधू के कक्ष में जाती है जहां उसके कक्ष के द्वार पर महिलाओं के द्वारा ''बांट छेका'' (राह रोका) जाता है जिन्हें कुछ रुपये या उपहार देकर बांट छेका नेंग दिया जाता है। इसके बाद समाज के मुखिया या महला करिया के द्वारा वर-वधू को सिर पर मौर-मुकुट बांधा जाता है। तत्पश्चात वधू की बुआ कन्या को अपने गोद में बैठाती है और अन्य महिलाओं द्वारा उसके अंजरी में चांवल और एक गांठ हल्दी दी जाती है। कन्या छः बार चांवल को अपनी अंजरी से नीचे गिरा देती है एवं सातवी बार जब वधू चांवल को अंजरी से गिराती है, तब उसे बुआ अपने आंचल में उस चांवल को पकड़ती है।

इसी समय महला करिया द्वारा मांडो में चांवल के आटे से चौक पुरा (रंगोली की भांति आकृति बनाना) जाता है तथा पीसी हल्दी से बना बनाया जाता है। इसके उपर कांसे के लोटे में धान भरकर उसके उपर आम के 7 पत्ते रखे जाते है और उसके उपर एक चोखनी में चांवल रखकर ऊपर दिया जलाकर कलश स्थापना की जाती है।

कलश स्थापना के बाद वर एवं वधू को अलग-अलग एक सफेद कपड़ा ढ़ककर उसके पीछे वर पक्ष के सभी सदस्य मांडो में आते है। इस समय वर पश्चिम दिशा से होकर दक्षिण दिशा में आता है तथा वधू पूर्व दिशा से निकलकर उत्तर दिशा मे खड़ी हो जाती है। तत्पश्चात वर पक्ष के पीछे वधू पक्ष वर के 5 गोत्रदेव या 7 गोत्रदेव या 9 गोत्र देव के अनुसार मांडो का भांवर (परिक्रमा) करते है जहां महिलाएं एवं पुरुष मंगल गीत गाते है।

इसके बाद वधू का भाई मांडो में रखे गये टांडी और कौड़ी के पानी को एक पर्रा को उल्टाकर वर-वधू के ऊपर पानी गिराया जाता है, इस समय कौड़ी के पानी को सभी विवाहित सदस्य अपने हाथ में लेते है। इस पानी को अविवाहित सदस्य हाथ में नही ले सकते, इस प्रक्रिया को धरम पानी कहा जाता है।

धरम पानी के बाद लगनिया उस स्थान पर लेट जाता है और अपने दोनों हाथों को फैलाकर एक दूरी बनाता है, इस दूरी पर दोनों ओर चांवल आटे से रेखा खिंची जाती है। इससे बाद वह वर पक्ष के स्थान से प्रारंभ करते हुए अपने पैर से तीन कदम नापता है, प्रत्येक कदम के बाद चांवल आटे से रेखा खिंची जाती है। फिर बीच के बचे स्थान में हाथ से बीत्ता नापते है इस प्रकार दोनों पक्ष के बीच केवल 2 अंगुल (2 ईंच) की दूरी पर चिन्ह लगाया जाता है। इस प्रकार नाप में दोनों

पक्ष के बीच केवल 2 अंगुल का अंतर ही रहता है। इस स्थान पर चांवल आटे का चिन्ह लगाया जाता है। इसके बाद वर वधू को उस स्थान के पास बैठाया जाता है जहां वर के हाथ को उस रेखा या चिन्ह पर रखते है और वधू के माता-पिता या भाई द्वारा वधू के हाथ वर हाथ के उपर रख दिया जाता है दोनों के हाथों में पहले वर का एक हाथ फिर वधू का एक हाथ उसके उपर वर का हाथ फिर वधू का हाथ रख दिया जाता है। इनके उपर एक अंजली चांवल डाली जाती है और कुंवारी सुत (श्वेत कच्चा धागा) से उनके हाथ को 7 बार लपेट कर उसका एक सिरा मांडो में उपर बांध दिया जाता है ।

पुनः अंजल में चांवल लेकर उनके हाथों में 6 बार डाला जाता है और वधू के भाई से मांडो में बंधी रस्सी को खुलवाया जाता है तथा उसे एक डोबला चांवल व 10 रुपये नेंग के दिये जाते है।

वर-वधू को उसी परदे में खड़े कराते है और दाये से बांये दिशा में मांडो की एक परिक्रमा कराकर वधू को वर के बाये ओर बिठाया जाता है। इसके बाद टीका का कार्यक्रम होता है। टीका कार्यक्रम में महला का भी वहां बैठना अनिवार्य है इसकी अनुपस्थिति में टीका कार्यक्रम प्रारंभ नही किया जा सकता है।

टीका -

इसे धरमटीका भी कहा जाता है। इस समय एक घुघरी (मिट्टी की छोटी हाण्डी) में पानी एवं एक थाली में हल्दी मिली चांवल रखी जाती है। घुघरी के पानी को कलश और वर-वधू एवं महला के ऊपर छिड़कर उन्हें हल्दी-चांवल का टीका लगाया जाता है और उन्हें स्वेच्छानुसार उपहार भेंट की जाती है। यह नेंग सर्वप्रथम परिवार के मुखिया द्वारा किया जाता है उसके बाद अन्य सदस्य धरमटीका करते है। टीका के बाद माहला करिया एक टोकनी में मुर्रा, चिवड़ा, हल्दी, गुड़, पीठा, पांच नेगा कपड़ा, चांवल, साग-सब्जी, बीड़ी एवं एक बोतल मंद मांडो के पास रखता है और कहता है यह पंचुनेगा है। जिसे वधू पक्ष को दे देता है। पंचुनेगा का अर्थ पांच कपड़ो से माना जाता है। जो निम्न है -

1. सुरसा कड़ा - ढेड़सास (वधू के भाई की पत्नी) के लिए
2. काकोबेन्द्री - वधू के पिता की माता के लिए
3. ढेड़सास - वधू की बहन के लिए
4. आजो बेन्द्री - वधू की माता की माता के लिए
5. महलईन पुटा - वधू के पिता की बहन के लिए

तत्पश्चात् वर एवं वधू पक्ष एक दूसरे के समक्ष खड़े हो जाते है और वधू का पिता वर के पिता को टीका की सामग्री सौपता है और भूल-चूक की क्षमा याचना करता है तथा बिदाई की तैयारियाँ शुरु की जाती है।

बिदाई

विवाह हेतु आये वर पक्ष के सभी रिश्तेदारों की बिदाई की जाती है। इस समय वर, महला-करिया एवं 4-5 सदस्य वधू घर पर रही रुक जाते है। अगले सुबह महला-करिया के द्वारा ग्राम में निवासरत सजातीय सदस्यों को आमंत्रण दिया जाता है। सदस्यों के आ जाने बाद वधू का भाई वर-वधू के हाथ पकड़कर उन्हें घर के बाहर छोड़ता है। वर पक्ष अपने ग्राम के लिये प्रस्थान करता है तथा साथ में वधू पक्ष के कुछ सदस्य भी उनके साथ जाते है।

वर के ग्राम में पहुंचने पर इनकी परघनी की जाती है जहां इन्हें कुरुलु में बैठाकर एक घघरी पानी से इनके पैर धोए

जाते है और इन्हें घर के भीतर मडवा के स्थान पर ले जाया जाता है | मडवा में समधियान एक दूसरे से समधी भेंट करते है | दोनों पक्ष साथ में भोजन करते है | भोज में विशेष रुप से बकरा भात होता है | बकरा साग को हाथों से सभी को एक दोना में एक-एक भाग दिया जाता है | जिसे बोकरा भोजी कहा जाता है |

भोजन के बाद वर पक्ष में धरमटीका कार्यक्रम होता है जिसमें वर पक्ष के सदस्य वर-वधू को उपहार भेंट करते है | इसके बाद वर वधू का गठजोड़ खोला जाता है | परिवार के पुजारी के द्वारा वर के धोती में बांधे गये 1 रुपये का सिक्का तथा एक रुई में 7-7 नग मूंग के दाने, हल्दी की गांठ, चांवल को खोला जाता है | मूंग, हल्दी और चांवल के दानो की जांच की जाती है | दानों के टुट जाने को अशुभ संकेत माना जाता है | यदि इनमे से 1 दाना टूटा हुआ हो तो माना जाता है कि, इस दम्पत्ति का पहला गर्भ ठीक नही होगा | वहीं कुछ दाने टुट जाते है तो माना जाता है कि, वर-वधू का दाम्पत्य जीवन ठीक नही चलेगा और यदि सभी दाने टुट जाते है जो माना जाता है कि, कुछ समय में वर या वधू की मृत्यु हो जायेगी |

दाने साबुत रहने पर उन्हें पीढ़ा में रखकर कसना (हल के लोहे वाले भाग) से पीस लिया जाता है तथा इसमें घी तथा गुड़ मिलाकर इसे गुडलु बनाकर वर-वधू को खिलाया जाता है तथा हल्दी को भी दो भाग में तोड़कर उन्हें खिलाया जाता है | गुडलु खिलाने का कार्य समाज के अष्टवर्ग द्वारा किया जाता है | इसके बाद वधू के माता-पिता के द्वारा वर-वधू को उसी स्थान पर खड़ा कर दिया जाता है और वधू का हाथ पकड़कर वर को दिया जाता है और उसे वर घर का पूखापिठा हो गई कहा जाता है | वर वधू के मुकुट को निकालकर घर की पाटी के बांधते है | मुकुट बांधने की प्रक्रिया मे घर के ज्येष्ठ भाई के विवाह का मुकुट पाटी के मध्य में तथा अनुज भाईयों के मुकुट उसके अगल-बगल में बांधा जाता है | इसके साथ विवाह सम्पन्न हो जाता है और सभी सदस्यों को भोजन कराया जाता है |

भोज के बाद एक परला मे चांवल, सब्जी तथा पुजेई दिये गये बकरे की एक टांग को मिर्च, नमक लगाकर रखा जाता है | वर पक्ष इन सामग्री को रख वधू पक्ष को ''डोलाबाट'' (ग्राम के सीमा) तक लेजाकर उन्हें सामग्री के साथ विदा करता है |

वधू पक्ष अपने ग्राम वापस आता है और लाए गये सामग्री से भोजन तैयार करता है और सपरिवार ग्रहण करता है |

मोझरन

विवाह सम्पन्न होने के 2-3 दिन बाद विवाह हेतु तैयार माडो को निकालकर उसे नदी / तालाब में विसर्जित किया जाता है | इसके बाद महला-करिया द्वारा विवाह में हुई भूल-चूक के लिए क्षमायाचना कर विवाह की बधाई और साधूवाद अर्पित की जाती है | सगा समाज द्वारा विवाह के प्रारंभ होने के पूर्व भण्डार गृह में खांदा के पास जो हाण्डी रखी गई होती है उसे वर-वधू को सौंप दिया जाता है और उन्हें दाम्पत्य जीवन की शुभकामनाएं दी जाती है | इसके बाद वर-वधू अपने गृहस्थ कार्यो में लग जाते है |

मृत्यु संस्कार

राजगोंड जनजाति में विवाह को एक प्राकृतिक नियम माना जाता है | अर्थात् जिस जीव का जन्म होता है उसकी

मृत्यु अवश्य होती है माना जाता है। इनमें किसी सदस्य के श्वास न चलना, नाड़ी ठण्डी पड़ना (नाड़ी रुक जाना), शरीर का ठण्डा पड़ जाना, आंख की पुतलियों का खुलना या बंद नही होना आदि के आधार पर मृत्यु पुष्टि माना जाता है। किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने पर डिहार परिहा (सगे संबंधी / समाज) को सूचित किया जाता है कि ''डिहार ल सकेल लौ''।

डिहार परिहा के आ जाने पर खटिया या बांस / लकड़ी की चैली बनायी जाती है। चैली बनाने में दो बांस / लकड़ी की लंबी लकडियों जिसे माई माटी कहा जाता है में क्षैतिज रुप में बांस की छोटी, छोटी लकड़ियां पटवा डोरी से बांधी जाती है, जिसके उपर श्वेत कपड़ा बिछाया जाता है तथा इसके चारों कोनों पर केले का पत्ता बांधा जाता है और गोबर के दिये बनाकर जलाएं जाते है।

व्यक्ति के शव उत्तर-दक्षिण दिशा की स्थिति मे चैली अथवा उल्टे खाट में रखा जाता है। शव को मृतक का भांजा एवं सगा (विषमगोत्रीय सदस्य) कांधे पर लेकर श्मशान जाते है। वहीं एक सदस्य बांस की टोकरी में धान, मुर्रा, एक कुडेरा (मिट्टी का छोटा पात्र) व कलौंजी में हल्दी व पानी रखकर शव के आगे-आगे चलता है। घर से निकलने के बाद शव को ग्राम के एक दोराहें पर शव को उतारकर रखा जाता है जहां मृतक परिवार की महिलाएं आती है। इस जगह 05 महिलाएं कुडेरा में रखे हल्दी पानी से शव को सिर से पैर तक उतारती (छिड़कती) है। मृतक यदि विवाहित हो तो इसी स्थान पर स्वजातीय सदस्य द्वारा मृतक की पत्नी की चुड़िया तोडता है जिसके पश्चात महिलाएं स्नान को घाट की ओर चली जाती है। स्वजातीय सदस्य ही मृतक की पत्नी को लेकर घाट पर जाता है जहां महिलाएं काली मिट्टी से केश धोकर स्नान करती है।

दूसरी ओर शव के श्मशान घाट पहुंचने के पूर्व स्वजातीय सदस्यों द्वारा शव को दफनाने गढ्ढे खोदा जाता है तथा गढ्ढे की लिपाई गोबर पानी से की जाती है। शव श्मशान घाट पहुंचने पर उसे गढ्ढे के करीब रखा जाता है जहां उसके पहने सभी कपड़े व आभूषण निकाल दिये जाते है और उसे सफेद कपड़े का लंगोट पहनाया जाता है। इसके पश्चात शव को चैली के साथ गढ्ढे के 07 भांवर (परिक्रमा) Anti clockwise कर उसे दक्षिण दिशा में रख दिया जाता है।

शव को उसे लपेटे गये कपड़े की सहायता से गढ्ढे में छोड़ा जाता है, जिसके नीचे एक सफेद कपड़ा बिछा दिया जाता है। गढ्ढे में शव के सिर के पास कांसा धातु का लोटा या थाली कुछ सिक्के और धान डालकर रख दिया जाता है। तथा उपर से नमक छिड़क दी जाती है। इसके बाद मृतक का ज्येष्ठ पुत्र शव के सिर की दिशा में गढ्ढे के उपर से अपने हाथ पीछे रखे हुए मिट्टी डालता है। जिसके बाद सभी सदस्य मिट्टी डालते है। मिट्टी की एक परत डल जाने बाद मृतक का भांजा उस मिट्टी को अपने पैर से दबाता है। जिसके उपर 3 लकड़ियां शव के समनांतर रखी जाती है, ताकि कोई जंगली जानवर शव को कोई क्षति न पहुंचा सके। लकड़ी डालने के बाद पुनः मिट्टी डालकर गढ्ढे को भर दिया जाता है। क्षेत्र अनुसार गढ्ढे को उपर से पत्थरों के द्वारा ढक कर मठ का रुप दिया जाता है तथा शव के सिर के पास एक लंबा पत्थर उर्द्धवाधर गाड़ दिया जाता है। इसके बाद इसके उपर 05 छोटी-छोटी महुआ की लकड़ियां व एक मुठ्ठी मिट्टी डाली जाती है।

सगा द्वारा एक बिड़ी जलाकर मृतक के सिर के स्थान पर छोड़ दी जाती है। दो विषम गोत्रीय सदस्य मठ के दोनों तरफ खड़े होते है और एक टंगिया को उल्टा लगाकर एक दूसरे की ओर टंगिया को देते है और शव को बांधते है। जिसे धार मारना कहा जाता है। इस प्रकार माना जाता है कि मृतक की आत्मा बाहर नही आयेगी। तत्पश्चात् साथ लाई गई सभी सामग्री वही छोड़ दी जाती है। गड्ढा खोदने लाए गये सभी औजारों को उल्टा लगाकर सभी सदस्य स्नान को नदी या तालाब को जाते है।

पुरुष वर्ग के नदी / तालाब पहुचने पर महिलाएं अपने गीले कपड़ों में ही एक कतार में जिसमें मृतक की विधवा आगे रहती है घर वापस आती है। घर के द्वार पर आने वाले सभी सदस्यों पर विषमगोत्रीय सदस्य दूध-पानी (गाय का दूध और पानी) छिड़क कर उन्हें पवित्र करता है तदोपरांत सभी घर में प्रवेश करते है।

दूसरी ओर पुरुष सदस्य भी काली मिट्टी से केश धोते है और स्नान करते है। इसके बाद एक विषम गोत्रीय सदस्य साथ लाये गये टंगिया को हाथ में पकड़कर उसके उपर एक गीले कपड़े से पानी रिसाता है जिसे सभी सदस्य अपने हाथों में लेकर सिर पर लगाते है। जिसे टंगिया पानी कहा जाता है। सभी सदस्य अपने गीले कपड़ों में ही मृतक के घर एक कतार में जाते है। घर के द्वार पर दूध पानी छिड़का जाता है और घर में प्रवेश करते है। मृत्यु दिवस से 03 दिन तक विषमगोत्रीय परिवार द्वारा मृतक के परिवार को भोजन बना कर खिलाया जाता है जिसे मीठी-पानी कहा जाता है।

दूसरे दिन मांदी तथा परिहा के लोग ही स्नान करने घाट पर जाते है।

तीसरे दिन (तीज नहावन)

मृत्यु दिवस के तीसरे दिन तीजनहावन का होता है। इस दिन सभी सगा (स्वगोत्रीय) सदस्यों का मुण्डन किया जाता है पूर्व में 7 या 9 वें दिन मुण्डन किया जाता था। किन्तु मृतक के ज्येष्ठ पुत्र का मुण्डन इस दिन नही किया जाता है। यदि पुत्र द्वारा मृत्यु के 21 वें दिन जीवपानी लाने का कार्य निर्धारित होता है जो 21 वें दिन ही इसका मुण्डन होता है अन्यथा तीसरे दिन गंगाघाट (जलस्त्रोत) में मुण्डन किया जाता है।

पुरुष वर्ग के स्नान हेतु घाट जाने के पूर्व एक कोड़ी या ठेलका में भात-दाल, परई (मिट्टी के तवा जैसा पात्र) में चांवल पीठा (चिला रोटी) बनाया जाता है। उक्त सामग्री के साथ कुकरा गार (मुर्गी का अण्डा), धूप अगरबत्ती, एक दोना चांवल, मंद, अमृत पानी (दूध, दही, शक्कर, शहद, घी) रख कर मठ (शवाधान स्थल) पर लेकर जाते है। शवाधान स्थल पर एक साजा के पत्ते को रख कर मृतक का ज्येष्ठ पुत्र बाये हाथ से लाए गये सामग्री को बोय हाथ से उसके उपर रखता है। यहां से घाट जाने वाले रास्ते में 50 कदम की दूरी पर साथ लाये गये अण्डे को ''अकस पिंडस'' के नाम पर रखकर उसे बाये पैर से लांघता है और घाट की तरफ सभी चले जाते है।

घाट पर इनके द्वारा नौ किलस (मूंग, तिल, सरसो, मड़िया, ज्वार, भादरा / बाजरा, उड़द, चांवल और कोदो) को साथ लेकर जाते है। जहां घाट के किनारे दूबी (घास) को गड़ा कर दातुन रखा जाता है जिसके समक्ष ज्येष्ठ पुत्र दीपक जलाता है। सभी सदस्य स्नान कर किलस को इस स्थान पर 3 बार डालकर उसके उपर 3 बार पानी छोड़ते है।

इसके बाद एक सगा आंवले की एक डाल हाथ में लेकर एक लोटे से उसपर उपर से पानी डालता है जिसे सभी उपस्थित सदस्य हाथ में लेकर उसे अपने सिर पर लगाते है। जिसे ''आंवला पानी'' लेना कहा जाता है। इसके बाद सभी सदस्य कतार में घर वापस आ जाते है।

मुड़मेरा, हाण्डी हेरा या खंदोली

सभी सदस्यों के घर वापस आ जाने के बाद आंगन में एक हाण्डी में भात रखते है। ज्येष्ठ पुत्र द्वारा उस स्थान पर पूरखा या पूर्वजों को याद कर पूजा की जाती है तथा नारियल तोड़कर उसका जल अर्पित किया जाता है।

हाण्डी के भात में नारियल का टुकड़ा और नीम की पत्ती के साथ 4 से 5 वर्ष के 5-7 बच्चो को यह भात खिलाया

जाता है। जिसे बालभोग या करुभात कहा जाता है।

इसके बाद जिन सदस्यों द्वारा शव को कांधा दिया गया होता है उन्हें आंगन में एक पंक्ति में बिठाया जाता है। जिनके एक ओर एक दोना में तेल तथा एक दोना में दूध रखा जाता है। ज्येष्ठ पुत्र नारियल की बुच या झाल से उनके पीठ की तरफ तेल को कमर से सिरकी ओर लगाता है जिसे तेल चढ़ाना कहा जाता है तथा इसके बाद उस बुच से दूध लेकर उनके सिर से पीठ तक दूध छिड़कता है जिसे दूध उतारना कहा जाता है। इस प्रकार कांधे दिये गये सदस्यों की शुद्धि की जाती है। इसके बाद खात-खवई (भोज) सभी सदस्यों को कराया जाता है।

राजगोंड जनजाति में गर्भवती स्त्री की मृत्यु हो जाने पर उसे श्मशान में न दफनाकर उसे जंगल में दफनाया जाता है। क्योंकि इनके द्वारा माना जाता है कि ऐसी स्त्रियां भूत-प्रेत बनकर घर के सदस्यों को परेशान करती है।

वहीं किसी सदस्य की माहमारी से यदि मृत्यु हो जाती है तो उसका दाह संस्कार किया जाता है। पूर्व में कुष्ठ आदि महामारी से ग्रसित सदस्यों को ग्राम / बस्ती से बाहर कुरिया (झोपड़ी) में रखा जाता था तथा उनकी मृत्यु हो जाने पर उन्हें कुरिया के साथ जला दिया जाता था।

जीवपानी -

राजगोंड जनजाति में जीवपानी लाने का अर्थ दिवंगत आत्मा को अपने पूर्वजों में मिलाना तथा उन्हें घर के डूमाघर में स्थापित करना है। इनमें जीवपानी पृथक-पृथक रुप से अथवा एक साथ विगत समय में दिवंगत हुए परिवार के सदस्यों को एक साथ भी लाने की अनिवार्य परम्परा है। जीवपानी नही लाने की दशा में पूर्वजों द्वारा उन्हें स्वप्न में आकर परेशान करना या परिवार में विपत्ति या बीमारी का आना पूर्वजों के रुष्ठ होने से माना जाता है।

सामान्यतः जीवपानी लाने का कार्य किसी सदस्य की मृत्यु के 21 दिन या विवाह के अवसर पर भी किया जाता है। जीवपानी लाने के लिए सभी सगा (स्वजातीय सदस्यों) को निमंत्रण दिया जाता है। सभी सदस्यों के आ जाने के बाद दो मिट्टी के कलश लिए जाते है। इन कलशों के गर्दन के भाग को कुंवारी धागे से 7 बार लपेटा जाता है। इन्हें लेकर मृतक के भांजे (मृतक बहन के पुत्र) जाते है। भांजे के द्वारा एक कलमी वृक्ष की दो लकड़ियो को मूर्त रुप दिया जाता है जिसे परघनी कर लाया जाता है और घाट पर (नदी या तालाब किनारे) सभी जाते है। घाट पर महुआ की डाली को गड़ाकर उसके उपर जामुन डाल उसके उपर बांधा जाता है। इस महुआ डाली के चारो तरफ चार महुआ डाल के खम्भे गाड़े जाते है। जिन्हें परस्पर कुंवारी धागे से बांधकर घेरा जाता है। इसके समक्ष लाये गये हाण्डी को रखकर उसके सामने भांजे के घर से लाये गये मृत स्वरुप कलमी लकड़ी को रखा जाता है। जहां कलमी डाल और महुआ के मांडो को हल्दी तेल चढ़ाया जाता है। इसके बाद से दोनो हाण्डी में घाट का पानी लिया जाता है जिसमें से एक हाण्डी में मछली या कोई भी जीव रखना अनिवार्य होता है तथा दूसरे हाण्डी में केवल पानी रखा जाता है।

जीव रखे हाण्डी को मृतक की बहन या उसकी पुत्री सिर पर रखती है और दूसरे हाण्डी को मृतक के ज्येष्ठ पुत्र की पत्नी (बहू) सिर पर रखती है। इन्हें सिर पर रखकर बहु आगे और पुत्री पीछे रहकर मांडो के 7 फेरे लगाती है। इसी समय एक स्वजातीय महिला चांवल आटा और पानी प्रत्येक भांवर के साथ गिराती है। यह कार्य परगनिहा या देवगोंड सदस्य भी कर सकते है। भांवर के बाद उक्त हाण्डी को बाजे-गाजे के साथ घर लाया जाता है। इस समय हाण्डी सिर पर रखी महिलाओं के उपर पूर्वज आकर बैठता है और वह उक्त पूर्वज की भांति व्यवहार करने लगती है और पूर्वज के इच्छानुसार वस्तु या सामग्री

की इच्छा व्यक्त करती है। इच्छापूर्ति नही होने तक वह महिला सामान्य व्यवहार नही करती इसलिए परिवार के सदस्यों के द्वारा उनकी इच्छानुसार वस्तु उपलब्ध करायी जाती है।

घर आकर हाण्डी को घर के आंगन के पूर्व दिशा में रखा जाता है। जिसे भांजा और परिवार के मुखिया कांवर में टोकनी बांधकर हाण्डी को घर के माई कुरिया (पूजा कक्ष) में लेकर जाते है जहां घर के सदस्य द्वारा उन्हें परघा कर (स्वागत कर) नियत स्थान पर रखते है। इस समय भी हाण्डी को लाने वाले सदस्यों पर पुरखा चढ़ता है। जिन्हें उनके इच्छानुसार सामग्री दी जाती है सामग्री नही देने पर वह आगे नही बढता है।

इसी स्थान पर 2-3 किलो चांवल के आटे से पिरामिड रुप में आटे को एकत्र किया जाता है और गिलास से इसे चिकना किया जाता है। जिसे पिण्ड पारना कहा जाता है। पिण्ड को एक नयी हाण्डी से ढक दिया जाता है और घर की म्यार से बंधे एक कुंवारी धागे से पिण्ड को छुवाया जाता है। घाट से लाये गये दोनों हाण्डी को पिण्ड के पास रखकर उसकी पूजा की जाती है तथा इन्हें इसी अवस्था में रातभर के लिए छोड़ दिया जाता है।

अगली सुबह स्नान करने के पश्चात परिवार के सदस्यों के द्वारा पिण्ड को ढककर रखे गये हाण्डी को हटाया दिया जाता है। चांवल आटे से बनाये गये पिण्ड पर किसी जीव के चलने या किसी प्रकार की आकृति दिखाई देती है। वह आकृति पुष्टि करता है कि, पुरखा उस जीव के रुप में पिण्ड में आया था। पिण्ड पर यदि खुर के जैसा चिन्ह दिखलाई पड़ता है तो उस स्थान पर बकरे की पुजेई दी जाती है और यदि किसी दूसरे जीव के निशान मिलते है जो वहां मुर्गा/मुर्गी की पुजेई दी जाती है। यदि पिण्ड पर किसी भी प्रकार का कोई चिन्ह अंकित नही होता है तो उसे पुरखा का रुष्ठ हो जाना माना जाता है। इसके बाद सदस्यों को खात-खवई (भोज) दिया जाता है।

जीवपानी लाने के दिन से ही दिवंगत सदस्य को ''पुरखा'' (पूर्वज) माना जाता है।

राजगोंड जनजाति में कुछ ऐसे नियम भी है जिनके कारण संबंधित मृत व्यक्ति का जीवपानी लाना वर्जित है। उन्हें परिवार का पूर्वज नही माना जाता है। जैसे - किसी गर्भवती स्त्री की मृत्यु हो जाने पर उसका जीवपानी नही लाया जाता है वहीं ''रांडी-छारीं'' होने (किसी विधवा महिला द्वारा पुर्नविवाह कर लेने) पर उस महिला का भी जीवपानी नही लाया जाता है।

अध्याय 07
सामाजिक संगठन



मानव शरीर संगठन का एक उत्तम उदाहरण है, जहां शरीर के विभिन्न अंग होते है और उन प्रत्येक अंगों का पृथक-पृथक कार्य होता है फिर भी वे एक दूसरे से स्वतंत्र नही होते है वे एक दूसरे के साथ परस्पर अन्त:क्रिया करते रहते है। जिसके फलस्वरुप संपूर्ण शरीर संतुलित रहता है। उसी प्रकार समाज चाहे वह आदिम हो या आधुनिक प्रत्येक समाज में कुछ न कुछ व्यवस्था हुआ करती है। जिसके अन्तर्गत अनेक सामाजिक समूह तथा सामाजिक संबंधों का एक जाल होता है। जो सब एक दूसरे से स्वतंत्र होकर नही करते है अपितु वह एक इकाई के रुप में मिलकर कुछ स्थापित नियमानुसार कार्य करते है। फलस्वरुप समाज के सदस्यों का पारम्परिक संबंध और सामाजिक जीवन नियंत्रित होता है।

इलियट तथा मैरिल ने सामाजिक संगठन को परिभाषित करते हुये लिखा है कि, ''सामाजिक संगठन वह दशा या स्थिति है जिसमें एक समाज की विभिन्न संस्थाये अपने स्वीकृत उद्देश्यों के अनुसार कार्य करती है'' वही जोन्स के अनुसार ''सामाजिक संगठन वह व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज के विभिन्न भागों में आपस में तथा पूरे समाज के साथ एक अर्थपूर्ण ढंग से संबंध स्थापित होता है।



- सामाजिक संगठन का निर्माण विभिन्न ईकाईयों से होता है जिसमें परिवार, गोत्र व्यवस्था, वंश व्यवस्था, गोत्र समूह, द्विदल संगठन, टोटमवाद, नातेदारी आदि प्रमुख है उसी प्रकार राजगोंड जनजाति का भी अपना एक सामाजिक संगठन है जो अपने सदस्यों को समाज के कुछ स्वीकृत उ`श्यों के अनुसार कार्य करती है तथा उनके पारम्परिक संबंधों एवं सामाजिक जीवन को नियंत्रित करती है।

- परिवार

आगबर्न औश्र निमकॉफ के अनुसार ''बच्चों या बिना बच्चों वाले एक पति-पत्नी के या किसी एक पुरुष या एक स्त्री के अकेले ही अपने बच्चो सहित

- एक थोड़े बहुत स्थायी संघ को परिवार कहा जाता है।'' राजगोंड जनजाति के

सामाजिक संगठन में निम्नांकित आधार पर परिवार पाये जाते है -



1. परिवार की सदस्य संख्या

परिवार की सदस्य संख्या के आधार पर राजगोंड जनजाति में एक विवाहित पति-पत्नी और उनके अविवाहित संतानों के एक साथ निवासरत होने के कारण मूल या केन्द्रीय प्रकार के परिवार, पति-पत्नी एवं उनके विवाहित बच्चे या एक ही वंश व्यवस्था के एक से अधिक मूल परिवारों के एक साथ रहने के आधार

पर संयुक्त प्रकार के भी परिवार पाये जाते है। इनमें विस्तृत परिवार अपेक्षाकृत कम होते है, किन्तु वे भी सामाजिक रुप से मान्यता प्राप्त है जिसमें विवाहित पति-पत्नी और उनके बच्चे तो होते ही है, साथ ही विवाह द्वारा बने कुछ संबंधी भी आ जाते है।

2. वंश व्यवस्था का आधार

राजगोंड समुदाय एक काल्पनिक अथवा ज्ञात पिता के वंश के आधार पर पितृवंशीय (Patrilineal) व्यवस्था वाला समुदाय होने के कारण इनमें सामान्यतः पितृवंशीय परिवार ही पाये जाते है।

3. अधिकार या सत्ता का आधार

राजगोंड समुदाय में परिवार की सत्ता या अधिकार पिता का होता है, वहीं परिवार मे सम्पत्ति का हस्तांतरण पिता से पुत्र को होता है अतः राजगोंड समुदाय में परिवार पितृसत्तात्मक व्यवस्था के पाये जाते है।

4. विवाह के आधार पर

राजगोंड समुदाय सामान्यतः एक विवाही परिवार (Monogamous Family) व्यवस्था वाला समुदाय है, किन्तु इनमें बहुपत्नी विवाह (Polygamous Family) सामान्यतः या विशेष परिस्थितियों में सामाजिक मान्यता प्राप्त है।

5. आवास का आधार

राजगोंड समुदाय विवाह के पश्चात आवास स्थान के आधार पर पितृ स्थानीय परिवार (Patrilocal Family) वाला परिवार है जहां विवाह के पश्चात पति अपनी पत्नी को उसके पिता के घर से ला कर अपने पिता के परिवार में रखता है, वहीं वर्तमान में विभिन्न परिस्थितियों के कारण विवाह पश्चात नव स्थानीय परिवार भी देखने को मिलते है हालांकि ऐसे परिवारों की संख्या कम ही देखने को मिलती है।

6. उत्तराधिकार का आधार

राजगोंड समुदाय में पितृमार्गी परिवार पाये जाते है, जहां इनमे सामाजिक-पारिवारिक पद उपाधियां तथा सम्पत्ति पर पिता का पूर्ण अधिकार होता है। पिता की मृत्यु के पश्चात उसके पुत्र ही उनके अधिकारी होते है।

वंश समूह (Lineage)

किसी भी जनजातीय सामाजिक जीवन और सामाजिक संगठन का महत्वपूर्ण आधार उनका, वंश समूह होता है। यह सामान्य पूर्वजों के वंशजों या उत्तराधिकारियों का एक विस्तृत और एक पक्षीय रक्त संबंधित समूह होता है।

वंश मे सामान्य पूर्वज कोई वास्तविक या ऐतिहासिक स्त्री अथवा पुरुष ही होता है। कभी-कभी समूह की सामाजिक प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिये पूर्णतया काल्पनिक पूर्वजों के आधार पर भी लोग वंश को विकसित कर लेते है जो कालांतर में वास्तविक रुप धारण कर लेते है।

राजगोंड जनजाति में कदमवंशी, जदूवंशी, बघेलवंशी, गंगवंशी, सोमवंशी, सूर्यवंशी, नीलवंशी एवं गगरामवंशी वंश पाये जाते है। सामान्यतः इनके प्रत्येक वंश के एक वास्तविक अथवा काल्पनिक पूर्वज है जो पूर्वकालीन गोंड शासकों को गढ़ या स्थान से स्वयं को संबंधित मानते है। जो निम्नांकित है -

क्र.	वंश का नाम	पूर्वज का नाम	गढ़ या स्थान का नाम
1.	कदमवंशी	रैतालबुड़ा	धमधागढ़
2.	जदूवंशी	पाईकराय	लोहागढ़
3.	बघेलवंशी	खन्डूअल	आग्रा
4.	गंगवंशी	गादीमा	लांजीगढ़
5.	सोमवंशी	मनिकस्वरी	बैरागढ़
6.	सूर्यवंशी	जुंघा	चंदागढ़
7.	नीलवंशी	लिंगा	हीरागढ़
8.	गंगरामवंशी	गड़दलगुमा	गढ़मण्डला

गोत्र (Clan)

जनजातीय सामाजिक संगटन का तीसरा महत्वपूर्ण आधार उनमें पायी जाने वाली गोत्र-व्यवस्था है, गोत्र सामान्यतः कई वंशों का समूह हो सकता है, जो माता या पिता किसी एक पक्ष के समस्त रक्त संबंधियों से मिलकर बनता है, अर्थात गोत्र वंश का ही विस्तृत रुप होता है तथा गोत्र सदैव एक पक्षीय होता है।

राजगोंड जनजाति में प्रमुख रुप से 08 गोत्र मरकाम, नेटी, सोरी, नेताम, पोरटी, जगत, ओटी एवं मरई पाये जाते है।

राजगोंड समुदाय के अनुसार इनमें गोत्रों का विभाजन इनके द्वारा माने जाने वाले अराध्य पूर्वज देवों की संख्या के आधार पर होता है जो निम्नांकित है -

क्र.	गोत्र नाम	वंश	देव संख्या	देव के नाम
1.	मरकाम	कदमवंशी	03	भूपति भोपालपति गजपति
2.	नेटी	जदूवंशी	03	सिरतोला लक्ष्मणतोला रामतोला
3.	सोरी	बघेलवंशी	03	आघासोरी बाघासोरी मानाचंद सोरी
4.	नेताम	गंगवंशी	04	गंगसाय कनसाल साय सरवल साय मायामुदगर साय (उपपुत्र - सिंगलसाय धुरगोंद)
5.	पोरटी	सोमवंशी	05	तेसरा पोरटी बेसरा पोरटी सहरा पोरटी मरहा पोरटी शंभू पोरटी
6	जगत	सूर्यवंशी	06	जुंगा जगत, आसर जगत, बेसरा जगत, धनी जगत, सिरजगत, चील जगत
7	ओटी	नीलवंशी	06	सुखा ओटी, दुखा ओटी, कोरकोटी ओटी,हीरालाल ओटी, मरालाल ओटी, हीराखान क्षत्री ओटी
8	मरई	गगरामवंशी	07	आंची नाग, बच्ची नाग, स्वेदनाग,चिराल नाग, महानाग, मणिनाग, कुराल नाग

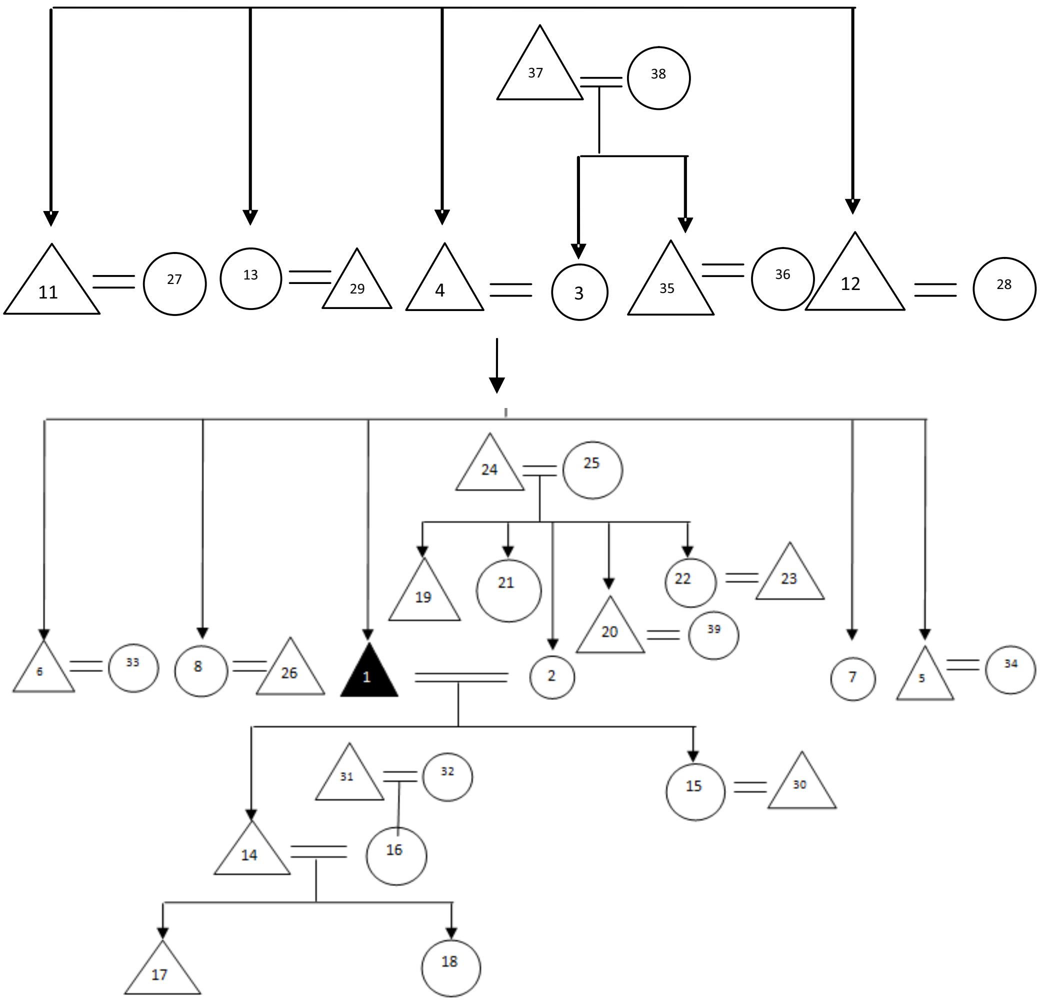
इनमें गोत्रनाम टोटेमिक होते है जो कछुआ, नाग, कुश घास आदि होते है। विवाह संबंध प्रायः बर्हिविवाही गोत्र में स्थापित किया जाता है । समान संख्या के अराध्य देव को मानने वाले परिवारों में विवाह संबंध निषिद्ध होते है।

सम्पत्ति हस्तांतरण –

राजगोंड में सम्पत्ति का हस्तांतरण पिता से उनके पुत्रों में होता है। पिता के जीवित रहते ही इनमें सम्पत्ति का बटवारा कर दिया जाता है। पिता की सम्पत्ति में सभी पुत्रों का समान रुप से बटवारा किया जाता है। किन्तु ज्येष्ठ पुत्र को सम्पत्ति का कुछ अधिक भाग प्राप्त है। जिसे **जेठासी** कहा जाता है। वही माता यदि जीवित हो तो पृथक से एक भाग उन्हें दिया जाता है। पिता की मृत्यु उपरांत जिस पुत्र के द्वारा माता का भरण पोषण किया जाता है उस भाग का उपयोग तत्कालीन समय में संबंधित पुत्र के द्वारा ही किया जाता है। पूर्वजों या पिता की सम्पत्ति में पुत्रियों को अधिकार नही दिया जाता है।

नातेदार संबोधन एवं शब्दावली (Kinship terms)

एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों या अपने संबंधियों को किसी एक शब्दनाम विशेष से पुकारते अथवा संबोधित करते है। राजगोंड जनजाति में रक्त संबंधी एवं विवाह संबंधी नातेदारी शब्दावलियां एवं संबोधन किसी व्यक्ति के लिए प्रयुक्त किया जाता है।



नातेदारी संबंध (Kinship Relation)

क्र.	संबंध	वंशावली उल्लेख	संबोधन
अ	रक्त संबंधी नातेदार		
1	स्वयं (ईगो)	1	-
2	स्वयं की पत्नी	1-2	बुआसेन, कन्या
3	स्वयं की माता	1-3	मां
4	स्वयं का पिता	1-4	बुआ
5	स्वयं का छोटा भाई	1-5	भाई
6	स्वयं का बड़ा भाई	1-6	दोदा
7	स्वयं की छोटी बहन	1-7	बुएन
8	स्वयं की बड़ी बहन	1-8	नना
9	स्वयं के पिता के पिता	1-4-9	दादी
10	स्वयं के पिता की माता	1-4-10	आई
11	पिता के बड़े भाई	1-4-11	बोड़ु
12	पिता का छोटा भाई	1-4-12	कोका
13	पिता की बहन	1-4-13	नानी
14	स्वयं का पुत्र	1-14	बेटा, बाबू
15	स्वयं की पुत्री	1-15	बेटी, नोनी
16	स्वयं के पुत्र की पत्नी	1-14-16	बोह
17	स्वयं के पुत्र का पुत्र	1-14-17	नाती
18	स्वयं के पुत्र की पुत्री	1-14-18	नातन

ब	विवाह संबंधी नातेदार		
21	स्वयं की पत्नी का बड़ा भाई	1-2-19	डेढ़सला
22	स्वयं की पत्नी का छोटा भाई	1-2-20	सला
23	स्वयं की पत्नी की बड़ी बहन	1-2-21	डेढ़सास
24	स्वयं की पत्नी की छोटी बहन	1-2-22	साली
25	स्वयं की पत्नी की बहन का पति	1-2-23	सोढू
26	स्वयं की पत्नी के पिता	1-2-24	मामू
27	स्वयं की पत्नी की माता	1-2-25	नानी
28	स्वयं की बड़ी बहन का पति	1-2-26	बोयेनजुऐ
29	स्वयं के पिता के बड़े भाई की पत्नी	1-2-27	काको
30	स्वयं के पिता के छोटे भाई की पत्नी	1-2-28	काकी
31	स्वयं के पिता के बहन का पति	1-2-29	मामू
32	स्वयं की पुत्री का पति	1-15-30	जुऐ
33	स्वयं के पुत्र की पत्नी का पिता	1-14-16-31	समधी
34	स्वयं के पुत्र की पत्नी की माता	1-14-16-32	समधन
35	स्वयं के बड़े भाई की पत्नी	1-6-33	भाभी
36	स्वयं के छोटे भाई की पत्नी	1-5-34	बोह
37	स्वयं की माता का भाई	1-3-35	मामू
38	स्वयं की मां के भाई की पत्नी	1-3-35-36	नानी
39	स्वयं की मां का पिता	1-3-37	आजो
40	स्वयं की मां की माता	1-3-38	काको

41	स्वयं के पत्नी के भाई की पत्नी	1-2-20-39	नानी
42	पति का छोटा भाई	2-5	देवर
43	पति के भाई की पत्नी	2-5-34	देहरन
44	पति के बड़े भाई	2-6	जेठ
45	पति के बड़े भाई की पत्नी	2-6-33	जेठन







अध्याय 08
धार्मिक जीवन एवं विश्वास



राजगोंड जनजाति अपने पूर्वजों को प्राथमिक देव मानते है तथा वंश आधारित देव की पूजा सर्वप्रथम की जाती है। एक वंश में गोत्र के अनुसार देवों की संख्या होती है। इनकी पूजा प्रत्येक तीज-त्योहारों, संस्कारों में प्रथमेय की जाती है। जिसे पुरखा-पूजा कहा जाता है। तत्पश्चात ही अन्य देवी-देवताओं की पूजा की जाती है। जिस स्थान पर देव रखा जाता है वहां विशेष अवसरों पर बकरे की पुजई एवं महुआ की मंद अर्पित की जाती है।

इनके देवी-देवताओं में बुढ़ादेव, लिंगादेव, जंघादेव, बुढ़ाराजा, जुनाडोमा, माडोमा, चतुर्भुजी, निराकार, गंगादी, बुढ़ी माई आदि प्रमुख है। प्रमुख देवों के साथ-साथ निम्नांकित आराध्य देव है -



1. **माटी देवता** - राजगोंड जनजाति बहुत पहले अन्य स्थान में अपने मूल स्थान से वर्तमान स्थान पर निवासित हुए है वहां मूल स्थान की मिट्टी लाकर निवासरत ग्राम में उस मिट्टी को एक स्थान पर **माटीदेव** के रुप में स्थापित किया गया है। माटीदेव के स्थान के आस-पास बसाहट तैयार की गई। माटी देवता का त्यौहार मई से दिसम्बर माह के मध्य किसी भी तिथि में मनाया जाता है। इसमें काली पोई (मुर्गी का बच्चा) सुअर, मंद, मुर्गी की पूजेई दी जाती है तथा मंदार फूल, सिंदुर, धूप से पूजा अर्चना की जाती है। इस स्थान में दी गई पूजेई एवं प्रसाद को केवल पुरुष सदस्यों द्वारा ही ग्रहण किया जाता है।
2. **डोकरी माता** - यह देवी के रुप में आराध्य है, डोकरी माता की पूजा अप्रैल माह में की जाती है जिसमें खैरा बोकरा (भूरे रंग का बकरा), खैरा मुर्गी या पोई, महुआ का फूल, परसा फूल, जला हुआ महुआ और सिकुन का भोग लगाया जाता है।
3. **भीमा देव** - इनकी पूजा जून-जुलाई माह में सुअर, मुर्गा, बकरा की पुजेई तथा मंद की तरपनी देकर की जाती है। इनकी पूजा में केवल विवाहित पुरुष ही सम्मिलित होते है।
4. **धारनी देव** - धारनी देव के स्थान पर **लदा लदेन** एवं **भण्डारीन** एक साथ स्थापित किया जाता है। धारनी देव की स्तुति दिसम्बर से जनवरी माह में की जाती है। इसमें सफेद बकरा, गोंजा पंडरा (भूरे रंग का मुर्गी का बच्चा) की पुजेई दी जाती है। इनकी पूजा भी विवाहित पुरुष सदस्यों द्वारा की जाती है। इस अवसर पर लदालदेन तथा भण्डारीन को काला गडरा (मादा बकरा), काला परुवा (कबूतर) की पुजेई देकर मदार फूल अर्पित किया

जाता है। इनकी पूजा के प्रसाद को मासिक स्त्राव वाली महिला या गर्भवती महिला और पति ग्रहण नही कर सकता है।

5. खमेश्वरी-कुलेश्वरी - राजगोंड जनजाति में इन देवियों को एक ही स्थान पर रखा जाता है। इनके लिए बोकरा, गडरा, पेटी या कबूतर की पुजेई दी जाती है तथा इनकी पूजा में भी केवल विवाहित पुरुष ही शामिल होते है।

6. गादी माई - राजगोंड जनजाति में अपने परिवार के सदस्यों या अन्य मनोकामना पूर्ति हो जाने के उपरांत माघ माह में काला गडरा (कबूतर) की पूजेई देकर गादी माई को धन्यवाद ज्ञापन किया जाता है।

7. गोपाल गुसेन - इन्हें घर के देव के रुप में पूजा जाता है। इनकी प्रत्येक वर्ष के माघ माह में श्वेत अर्प के रुप में नारियल, सुपाड़ी, तिखुर, तिल का लड्डू, फूलालिया लड्डू (मुर्रा का लड्डू) चढ़ाया जाता है। गोपाल गुसेन के साथ ही घरजिया गुड़ा एवं चारचौरासी को फल-फूल दिया जाता है। जिसे सभी सदस्य ग्रहण करते है।

8. लोहा गड़ियान - इनकी की पूजा गोपाल गुसेन के साथ ही की जाती है जिसमें काला गडरा, काला मुर्गा की पूजेई दी जाती है जिसे बच्चे एवं महिलाएं ग्रहण नही करते है। इनके साथ ही झिटलु देव की पूजा करिया गोंजा मंद अर्पित कर की जाती है इन्हें अर्पित सामग्री को ग्राम में निवासरत अस्पृश्य जाति समुदाय को भेंट कर दिया जाता है।

9. काली माता - काली माता को शक्ति की देवी के रुप में आराध्य माना जाता है। इनकी पूजा प्रत्येक वर्ष दशहरा या विजयादशमी पर्व के दिन की जाती है। इन्हें प्रसन्न रखने काला गडरा की पूजेई दी जाती है और मदार फूल, तथा मंद अर्पित किया जाता है। इनकी पूजा का प्रसाद रजस्वला स्त्री एवं गर्भवती महिला ग्रहण नही करती है।

10. छोटी मावली - इनकी पूजा माघ माह में सभी सदस्यों द्वारा की जाती है।

घर के देवता के साथ-साथ ग्राम में सार्वजनिक रुप से सभी जाति समुदायों के साथ ग्राम व ग्रामवासियों की रक्षा के उद्देश्य से विभिन्न देवी-देवताओं को पूजा तथा उन्हें समय-समय पर कर्मकाण्डों के माध्यम से प्रसन्न रखने ग्रामवासियों द्वारा सम्मिलित रुप से छःमाह या प्रति वर्ष कम से कम एक बार ग्राम देवों की पूजा की जाती है। जो निम्न है -

देवी-देवता	स्थान	तिथि / माह	कर्मकाण्ड
1. शीतला माता	ग्राम के बाहर	चैत-भादो	बरई, मुर्गी की पूजेई एवं मंद
2. ठाकुर देवता	ग्राम के बाहर	कार्तिक	श्वेत बकरा, मुर्गी, मंद
3. धारनी देव	ग्राम के बाहर	कार्तिक	मुर्गी, श्वेत बकरा
4. बूढ़ी माई	ग्राम के बाहर	कार्तिक	भूरा बकरा, मंद
5. पठारपाठ	पहाड़ में	कार्तिक	भूरा बकरा, मंद
6. सहाड़ा देव	गौठान	कार्तिक	नारियल, धूप
7. भैंसासूर	तालाब	भादो	सुअर, काला मुर्गा
8. छापर	प्रारंभिक सीमा	भादो	भूरे रंग का मुर्गी का बच्चा

तीज-त्यौहार



जनजातीय समुदायों में देवी-देवताओं को हमेशा प्रसन्न रखने, कृषिउपज अच्छी होने, शिकार करने, नये फसलों से जुड़े कर्मकाण्डों की अवधारणाएँ प्रायः एक समान सभी जनजातियों में होती है। भले ही धार्मिक कर्मकाण्ड की विधियां अलग-अलग होते है तथा देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए जादू-टोना तथा बलिदान का भी सहारा लिया जाता है। जनजातीय समुदायों में पाये जाने वाली लोक संस्कृतियां, तीज-त्यौहार तब तक ही अपने मौलिकता को बनाये रखते है। जब तक वह जनजातीय समुदाय अपने लोक संस्कृति के बंधनों का पालन करता रहता है।

राजगोंड जनजाति में हरेली एवं नवाखाई त्यौहार का विशेष महत्व है। इनमें हरेली का त्यौहार जहां फसल चक्र के प्रारंभ को तथा नवाखाई अच्छी उपज के धन्यवाद स्वरुप मनाया जाता है। जिसमें पूरखा या पूर्वज तथा कुल देवों पहले को भोग लगाया जाता है। उक्त त्यौहार की तिथि व विवरण निम्नांकित है -

हरेली त्यौहार

आषाढ़ माह की आमावस्या के दिन राजगोंड जनजाति में हरेली त्यौहार मनाया जाता है जिसे **उवांस** त्यौहार भी कहा जाता है। इस त्यौहार को तीज त्यौहारों का प्रारंभ भी माना जाता है। हरेली त्यौहार में मुख्य रुप से पुरखा (पूर्वजों) की पूजा की जाती है जिसमें एक जोड़ी बकरा या मुर्गा या सुअर की पुजेई परिवार अपनी आर्थिक स्थिति के अनुरुप पुरखा के नाम पर दी जाती है। राजगोंड जनजाति में यदि किसी परिवार की नई पीढ़ी में कोई प्रथम विवाह होता है या विवाहोपरांत दम्पत्ति को प्रथम संतान की प्राप्ति होती है तब इनके द्वारा अनिवार्य रुप से पुजेई दी जाती है जिसे **बिहाबदी** कहा जाता है। पुजेई देकर पुरखा से नव दम्पत्ति के खुशहाल दाम्पत्य की कामना की जाती है।

नवाखाई

राजगोंड जनजाति द्वारा नवाखाई का विशेष महत्व है, भादो माह की पंचमी के दिन परिवार के सदस्य नए धान की बाली को लाकर उसे ढेंकी से कूटकर चांवल निकाला जाता है तथा इस चांवल को बिना धोए गुड़ मिलाकर खीर बनाई जाती है। बनाई गई खीर को कुरई वृक्ष के पत्ते या साजा वृक्ष के पत्ते में सर्वप्रथम पूरखा देव को भोग लगाया जाता है तथा भोग के पश्चात सहपरिवार खीर को प्रसाद स्वरुप ग्रहण किया जाता है। जिसे नवाखाई कहा

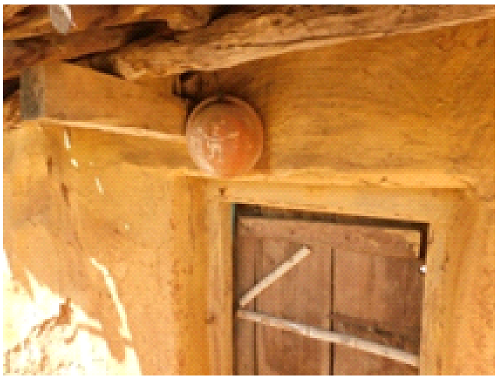
जाता है।

नवाखाई के पश्चात् अगहन माह (नवम्बर-दिसम्बर माह) में किसी विशेष दिन ग्राम का बैगा देवी स्थान पर गुप्त रुप से व्रत रखता है तथा देवी स्थान पर पूजा करता है। बैगा की पूजा के अगले दिन सुबह राजगोंड के परिवार के सदस्यों के द्वारा नए धान की फसल के चांवल धोकर भात बनाया जाता है। जिसे **नया च्वलध्वा** कहा जाता है। इस दिन के पश्चात ही परिवार नए चांवल को धोकर पकाते है।

धान कटाई के बाद धान की अच्छी प्राप्ति हेतु चोरु दिया पूजा, के साथ-साथ देवजात्रा, दसेरा (दशहरा) कुंवार माह में जितिया , देवारी (दीपावली), पुसपुन्नी, कार्तिक पुन्नी एवं हरेली त्यौहार मनाया जाता है।

जादू-टोना संबंधी अवधारणा

राजगोंड जनजाति आत्मावादी समुदाय है। ये शरीर को नश्वर तथा आत्मा को स्वतंत्र मानते है। किसी व्यक्ति की असामयिक मृत्यु होने या उसकी इच्छापूर्ति न होने पर उसकी आत्मा भटकती है तथा लोगों को परेशान करती है साथ ही बुरी शक्तियों के प्रभाव से जादु-टोना होना, भूत-प्रेत पकड़ना, नजर लगना जैसे घटना होने पर उसके समाधान हेतु सिरहा, गुनिया, बैगा की सहायता ली जाती है जो अलौकिक शक्तियों के सहायता से उक्त प्रकार की समस्या का निदान कुछ कर्मकाण्ड जैसे पूजा-पाठ, पुजेई, ताबीज, घर के दरवाजे पर टोटके/प्रतीक आदि के माध्यम से करने का प्रयास करता है।









अध्याय 09
राजनैतिक जीवन



राजगोंड जनजाति में जातिगत जाति पंचायत की व्यवस्था पायी जाती है जहां समाज से संबंधित प्रकरणों जैसे आपसी झगड़े, सम्पत्ति संबंधी मतभेद/बटवारे, वैवाहिक मामले, सामाजिक धार्मिक निर्णय, समारोह अथवा आयोजन संबंधी निर्णयों साथ-साथ सामाजिक नियम निर्देश जारी करना एवं समाज स्तर पर उनका पालन कराये जाने संबंधी कार्य किये जाते है। जाति पंचायत का प्रमुख **मुखिया** कहलाता है।

राजगोंड जनजाति में जाति पंचायत तीन स्तरों मे विभक्त है। जो निम्न है -

मांदी

सर्कल

राज



इन्हें क्रमशः मांदी चौकी या मांदी सभा, ग्रुप सभा एवं केन्द्र सभा भी कहा जाता है। एक ग्राम या एक से अधिक ग्राम के दो या दो से अधिक विषम गोत्रीय सदस्य मिलकर मांदी कहलाता है। मांदी चौकी के मुखिया का चुनाव मांदी के सदस्यों द्वारा किया जाता है। ग्राम स्तर के मामले या प्रकरण प्राथमिक रुप से मांदी चौकी में प्रस्तुत किये जाते है। मांदी चौकी में प्रकरण का निदान न होने की स्थिति में प्रकरण सर्कल या ग्रुप सभा को हस्तांतरित किया जाता है। 4-5 मांदी चौकी मिलकर सर्कल/ग्रुप सभा बनाते है। मांदी चौकी के मुखियाओं द्वारा सर्कल/ग्रुप सभापति का चुनाव किया जाता है।

सभी सर्कल/ग्रुपसभा मिलकर राज या केन्द्र सभा का निर्माण करते है। इनके पदाधिकारियों का चुनाव सर्कल/ग्रूपसभा के पदाधिकारियों के माध्यम से किया जाता है। राज/केन्द्र सभा में पारित निर्णयों या नियमों का पालन मांदी द्वारा अनिवार्य रुप से किया जाता है।

प्रत्येक सभा में प्रकरणो के निदान हेतु परम्परागत पदो की व्यवस्था देखने को मिलती है। इनके कुछ पद वंशानुगत तथा कुछ पद सामाजिक चुनाव के द्वारा निर्धारित किये जाते है। राजगोंड जनजाति के जाति पंचायत के

परम्परागत पदों में गोत्र का आधार प्रमुख है। इनमें पदों की व्यवस्था निम्नानुसार है -

सामाजिक पद	गोत्र	कार्य
नायक	- नेताम	- मुखिया
पोटा	- मरकाम	- मुखिया
मुडमांझी	- ओटी	- शुद्धिकरण का कार्य
सभापति	- कोई भी गोत्र	- सभा का संचालन
चपरासी	- कोई भी गोत्र	- सूचना वाहक
पंच	- जगत	- गवाह

मुखिया -

राजगोंड जनजाति में जाति पंचायत में पद व्यवस्था में प्रमुख स्थान मुखिया का होता है। मुखिया को नायक तथा पोटा कहा जाता है। **नायक नेताम गोत्र** के सदस्य होते है वहीं **पोटा मरकाम गोत्र** के सदस्य। मुखिया प्रत्येक मांदी का पृथक होता है यह पद वंशानुगत होता है।

मुडमांझी -

पंचायत व्यवस्था में **ओटी गोत्र** के सदस्य को मुडमांझी का पद दिया जाता है। इनका कार्य शुद्धिकरण का होता है। जो केश उतारने का कार्य करता है।

सभापति -

सभापति का पद किसी भी गोत्र के व्यक्ति के द्वारा धारित किया जा सकता है। सभापति का कार्य पंचायत का संचालन करने का होता है।

चपरासी -

यह पद के लिए भी गोत्र विशेष की बाध्यता नही है। चपरासी कार्य समाज को किसी भी प्रकरण या सूचनाओं को समाज के सदस्यों को पहुंचाना है।

पंच -

जाति समुदाय के 02 या 02 से अधिक सदस्यों को पंच या गवाह के रुप में नियुक्त किया जाता है यह पद जगत गोत्र के सदस्यों का होता है।

पद संरचना के संबंध में राजगोंड जनजाति में प्रचलित एक किवदंती अनुसार -

किसी समय भगवान शंकर द्वारा न्याय व्यवस्था को स्थापित करने दण्ड निर्धारण हेतु गंगा नदी के किनारे सभी गोंड सदस्यों

को बुलाया गया और उन्हें अपने हाथ आगे करने कहा गया। गंगा के पानी को हाथ में लेकर जब उस पानी को नीचे गिराया तब इसका पानी सर्वप्रथम नेताम गोत्र के व्यक्ति के हाथ मे गिरा इसलिए इन्हें नायक की उपाधि दी गई।

इसके बाद भगवान शंकर द्वारा दूध को गिराया गया तो दूध सर्वप्रथम मरकाम गोत्र के सदस्य के हाथ में गिरा इस कारण उन्हें पोटा का पद दिया गया।

तत्पश्चात भगवान द्वारा दण्ड उपरांत मुण्डन करने के उपकरण गिराये जो पोटी गोत्र के सदस्य के हाथ मे गिरा तो उन्हें मुडमांझी की उपाधि दी गई। इसी प्रकार उक्त न्याय व्यवस्था में गवाह के रुप में कुश गोत्र के सोरी एवं सूर्यवंश के जगत को गवाह के रुप में पदाधिकारी नियुक्त किया गया जिसे ''साखी'' कहा गया।

राजगोंड जनजाति में वर्तमान में भी किसी कार्यक्रम में नायक द्वारा सात समुद्र के पानी अर्थात् खीरगंगा, नीरगंगा, गोमतीगंगा, बहती गंगा, चलती गंगा के प्रतिकात्मक रुप से 07 खद्ढे खोदकर उनमें से पानी क्रिया जाती है तथा गाय का दूध की व्यवस्था पोटा द्वारा ही की जाती है। इनमें चपरासी की पृथक से वेशभूषा होती है जिसे विशेष पोषाक, बेल्ट एवं भाला दिया जाता है। इसका कर्तव्य व्यक्तिगत रुप से सभा में सम्मिलित होने परिवारों को मौखिक सूचना देने का होता है।

राजगोंड जनजाति में व्याप्त जाति पंचायत में पुरुषों का प्रतिनिधित्व ही अधिक पाया जाता है। किन्तु वर्तमान में प्रकरण विशेष पर महिलाओं की भागीदारी भी सुनिश्चित की जाती है। प्रकरणों पर सभा के द्वारा सामाजिक स्तर पर समझाईश देना, सामाजिक बंधन में रख बहिष्कार, सामाजिक समारोह में शामिल न करना, अर्थदण्ड तथा दोषी को भोज कराने जैसे दण्ड का प्रावधान है। जो निम्न है -

प्रकरण 01	-	आपसी झगड़ा
प्रावधान	-	प्रकरण का निपटारा मांदी सभा के माध्यम से किया जाता है।
दण्ड	-	समझाईश या खात-खवई (भोज)
प्रकरण 02	-	स्वजातीय लड़की का अन्य जाति के लड़के के साथ भाग जाने पर/विवाह कर लेने पर
प्रावधान	-	प्रकरण मांदी सभा में रखा जाता है किन्तु इसका निराकरण सर्कल सभा में ही किया जाता है।
दण्ड	-	लड़की को आजीवन समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है।
प्रकरण 02	-	एक ही गोत्र में विवाह कर लेने पर
प्रावधान	-	प्रकरण मांदी सभा में रखा जाता है किन्तु इसका निराकरण सर्कल सभा में ही किया जाता है।
दण्ड	-	लड़के-लड़की को आजीवन समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है।
प्रकरण 03	-	मंगनी या सगाई के हो जाने के पश्चात विवाह से मना कर देने पर
प्रावधान	-	प्रकरण मांदी सभा में रखा जाता है किन्तु इसका निराकरण सर्कल सभा में ही किया जाता है।
दण्ड	-	अर्थदण्ड के साथ खात-खवई तथा समझाईश

प्रकरण 03	-	खात-खवई (भोज नहीं देने पर)नही कराने पर
प्रावधान	-	प्रकरण मांदी सभा में रखा जाता है किन्तु इसका निराकरण सर्कल सभा में ही किया जाता है।
दण्ड	-	अर्थदण्ड के साथ खात-खवई तथा समझाईश दी जाती है।

उक्त प्रकरणों के निदान सर्कल सभा में नही होने पर ही प्रकरणों को राज सभा में हस्तांतरित किया जाता है। जहां के निर्णय सर्वमान्य होते है।







अध्याय 10
विकास एवं परिवर्तन

राजगोंड एक कृषि प्रधान जनजाति समुदाय है। यह समुदाय आज के परिवेश में जहां अपनी संस्कृति को आत्मीय रुप में धारण किये हुए है वहीं समाज की मुख्य धारा में भी तीव्र गति से शामिल हो रहा है। वर्तमान में समाज के सदस्य कई वैधानिक, शासकीय, अशासकीय, राजनैतिक पदों में अपने कर्तव्यों का पालन कर रहे है तो कई सदस्य शिक्षा व समाज सेवक या जनप्रतिनिधियों के रुप में भी अग्रणी भूमिका निभा रहे है। शासन के प्रयासों तथा इनके जागरुक होने से ही कई राजगोंड ग्रामों में अधोसंरचनात्मक विकास जैसे पंचायत भवन, सामाजिक मंच, शिक्षा के क्षेत्र में आंगनबाड़ी केन्द्र, प्राथमिक व माध्यमिक स्तर के स्कूल भवन स्थापित है।



वही ग्रामों में पहुंच मार्गो के रुप में सी.सी. रोड व डामर रोड, विद्युत व्यवस्था, पेय जल की आधुनिक सुविधाओं की उपलब्धता भी दिखलाई पड़ती है।









दूर दराज के क्षेत्रों के ग्रामों में भी शासन के द्वारा पी.डी.एस. के माध्यम से प्रत्येक माह राशन की सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है। जिससे ग्राम स्तर पर भी परिवारों को राशन उपलब्ध हो रहा है। इस प्रकार मूलभूत सुविधाओं की वृद्धि ग्राम एवं जनजातियों को एक सुखद भविष्य की ओर अग्रसर कर रहा है।






महिला व बाल विकास
WOMEN & CHILD DEVELOPMENT
मिनी
आंगनबाड़ी भवन निर्माण
ग्राम धुपकोट (बंदपारा)
स्वी. वर्ष- 2017-18, स्वी.राशि-6.45 लाख
ग्राम पंचायत-सुकलीभांठा (पुराना)
HN17
SHC-DHOOPKOT
Block-DEOBHOG

नोट



Chhattisgarh TRTI
TRIBAL RESEARCH AND TRAINING INSTITUTE

संचालनालय आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान

सेक्टर-24, नवा रायपुर अटल नगर (छ.ग.)

फोन: 0771-2960530

E-mail : trti.cg@nic.in, web. : www.cgtrti.gov.in